है ॥२४॥ हे केशव ! शिव चतुर्दशीके दिन प्रातःकालके समयसे लेकर जो-जो भी कर्तव्य पालन करने चाहिये उन्हें अब मैं तुमको बतलता हूँ आप सब ध्यानपूर्वक श्रवण करो ॥२५॥ धर्मरत बुद्धिमान् मनुष्यको प्रातःकालमें शिवरात्रिके दिन सानन्द शय्यासे उठकर आलस्यका त्याग करते हुए स्नान आदि नित्य-कर्म करना चाहिये ॥२६॥ इस अपने आह्निक कर्मके सांग सम्पन्न होने पर शिवालयमें जाकर विधिपूर्वक भगवान् शिवका अर्चन करे और अन्तमें नमस्कार करके पीछे सम्यक् रीतिसे सत्संकल्प करे ॥२७॥ हे देवोंके देव ! हे नीलकण्ठ ! आपको मेरा प्रणाम है। मैं आपके इस शिवरात्रिके व्रतको करनेकी सदिच्छा रखता हूँ ॥२८॥

तव प्रभावाद् देवेश निर्विघ्नेन भवेदिति ।
कामाद्याः शत्रवो मां वै पीडां कुर्वन्तु नैव हि ॥२९
एवं संकल्पमास्थाय पूजाद्रव्यं समाहरेत् ।
सुस्थले चैव यल्लिगं प्रसिद्धं चागमेषु वै ॥३०
रात्रौ तत्र स्वयं गत्वा संपाद्य विधिमुत्तमम् ।
शिवस्य दक्षिणे भागे पश्चिमे वा स्थले शुभे ॥३१
निधाय चैव यद् द्रव्यं पूजार्थं शिवसन्निधौ ।
पुनः स्नायात्तदा तत्र विधिपूर्वं नरोत्तमः ॥३२
परिधाय शुभं वस्त्रमन्तर्वासः शुभं तथा ।
आचम्य च त्रिवारं हि पूजारम्भं समाचरेत् ॥३३
यस्य मंत्रस्य यद्द्रव्यं तेन पूजां समाचरेत् ।
अमंत्रकं न कर्तव्यं पूजनं तु हरस्य च ॥३४
गीतैर्वाद्यैस्तथा नृत्यैर्भक्तिभावसमन्वितः ।
पूजनं प्रथमे यामे कृत्वा मंत्रं जपेद् बुधः ॥३५

हे देवेश ! मेरी प्रार्थना है कि आपके प्रभावसे मेरा यह व्रत निर्विघ्न होजावे और काम, क्रोधादि महाशत्रु मुझे पीड़ा न देवें ॥२९॥ इस रीतिसे सङ्कल्पकरके पूजनकी समस्त वस्तुयें एकत्रितकरे और इसके पश्चात् शास्त्रोंमें प्रसिद्ध ज्योतिर्लिंगकी सुरम्य स्थलमें स्थापना करनीचाहिए ।३०। रात्रि

में वहाँ स्वयं जाकर श्रेष्ठ विधानके साथ भगवान्‌शिवके दक्षिण भागमें अथवा पश्चिमभागमें स्थलमें उनसमस्त पूजाके उपचारोंको शिवके समीप रक्खे और फिर व्रतकरने वालेको स्नान करना चाहिए। ये कार्य समुचित विधिसे ही करनेचाहिए।३१-३२। अन्दरके वस्त्रके साथ शुभ वस्त्र धारण कर तीनबार आचमन करनेचाहिए इसके पश्चात् शिवके पूजनका आरम्भ करे ॥३३॥ जो पूजनका द्रव्य अर्पितकरे वह उसीके मन्त्रके सहित समर्पित करनाचाहिए। मन्त्रोंके बिना शिवका पूजन वैसेही कभी नहीं करे।३४। गायन-वादन तथा नर्तनके साथ परमभक्तिकी भावनासे बुद्धिमानको प्रथम प्रहरमें शिवका पूजन करके फिर 'ॐ शिवाय नमः' अथवा 'ॐ नमः शिवायः' इस पञ्चाक्षरी मन्त्रका जाप करना चाहिए ॥३५॥

पार्थिव च तदा श्रेष्ठं विदध्यान्मंत्रबान्यदि।
कृतनित्यक्रियः पश्चात्पार्थिवं च समर्चयेत्।३६।
प्रथमं पार्थिवं कृत्वा पश्च त्स्थापनमाचरेत्।
स्तोत्रैर्नानाविधैर्देवं तोषयेद्वृषभध्वजम्।३७।
माहत्म्यं व्रतसंभूत पठितव्यं सुधीमता।
श्रोतव्यं भक्तवर्येण व्रतसम्पूर्तिकाम्यया।३८।
चतुर्ष्वपि च यामेषु मूर्तिनां च चतुष्टयम्।
कृत्वाऽवाहतपूर्वं हि विसर्गावधि वै क्रमात्।३९।
काय जागरणं प्रीत्या महोत्सवसमन्वितम्।
प्रातः स्नात्वा पुनस्तत्र स्थापयेत्पूजयेच्छिवम्।४०।
ततः सप्रार्थयेच्भु नतस्कन्धः कृताञ्जलिः।
कृत्संपूर्णव्रतको नृत्वा तं च पुनः पुनः।४१।
नियमो यो महादेव कृतश्चैव त्वदाज्ञया।
विसृज्यते मया स्वामिन्व्रतं जातमनुत्तमम्।४२।

इस प्रकारसे इस उक्त मन्त्रका जपकरते हुएही परमश्रेष्ठ पार्थिवलिंग का निर्माणकरे फिर उसे स्थापितकरे और नित्य-क्रिया करके पार्थिवलिंग का पूजनकरे और अनेक प्रकार के स्तोत्रों द्वारा स्तवन करके भगवान्‌शिव

को सन्तुष्ट एवं प्रसन्नकरे ।।३६-३७।। इसके अनन्तर बुद्धिमान शिव-भक्त को व्रत सम्बन्धी याहात्म्यका पाठ करनाचाहिए। व्रतकी साङ्ग समाप्तिकी इच्छासे व्रत माहात्म्यका श्रवण करे ।।३८।। इस प्रकार शिव महारात्रिके चारों प्रहरोंमें आदिमें आवाहनसे लेकर क्रमशः विसर्जन पर्यन्त भगवान् शिवकी चारोंमूर्तियोंका अर्चनकरना चाहिए ।।३९।। इसमहारात्रिमें बड़ेही उत्साहकेसाथ विशेष उत्सव करते हुए प्रीति और भक्तिके सहित जागरण करना चाहिए,और दूसरेदिन प्रातःकाल होनेपर पुनः शिवकी स्थापनाकर पूजनकरना चाहिए ।।४०।। इसके अनन्तर अपनेकाधोंको झुकाकर विनम्र भावसे हाथों को जोड़ते हुए सदाशिव की प्रार्थना करे। इस तरह सम्पूर्ण व्रत विधिको समाप्तकर भगवान्शिवको बारम्बार नमस्कार करके प्रार्थना करनी चाहिए ।।३१।। हे स्वामिन् ! हे महादेव ! आपकी आज्ञासे मैने जो व्रतका नियम ग्रहण किया था वह अब समाप्त हो गया है। अब मैं आपका विसर्जन करना चाहता हूँ ।।४२।।

व्रतेनानेन देवेश यथाशक्ति कृतेन च।
सन्तुष्टो भव शर्वाद्य कृपां कुरु ममोपरि ।४३।
पुष्पाञ्जलिं शिवे दत्वा दद्याद्दान यथाविधि।
नमस्कृत्य शिवायैव नियमं तं विसर्जयेत् ।४४।
यथाशक्ति द्विजाञ्छैवान्यतिनश्च विशेषतः।
भोजयित्वा सुसन्तोष्य स्वयं भोजनमाचरेत् ।४५।
यामे यामे यथा पूजा कार्या भक्तवरैर्हरे।
शिवरात्रौ विशेषेण तामहं कथयामि ते ।४६।
प्रथमे चैव यामे च स्थापितं पार्थिवं हरे।
पूजयेत्परया भक्त्या सूपचारैरनेकशः ।४७।
पंचद्रव्यैश्च प्रथमं पूजनीयो हर सदा।
तस्य तस्य च मन्त्रेण पृथग्द्रव्यं समर्पयेत् ।४८।
तच्च द्रव्यं समर्प्यैव जलधारां रुदेन वै।
पश्चाच्च जलधाराभिर्द्रव्याण्युत्तारयेद् बुधः ।४९।

हे देवेश्वर ! हे सर्वाद्य ! आप मेरे यथा शक्ति किये हुए इस व्रतसे सन्तुष्ट तथा प्रसन्न होकर मुझ सेवकपर कृपाकी दृष्टि करें ॥४३॥ इसके पश्चात् भगवान् शंकरको पुष्पोंकी अञ्जलि समर्पित करके सविधि दान देवे तथा शिवको प्रणामकरके अपने गृहीत नियमका विसर्जन करे ।४४। शिव के भक्त एवं उपासक ब्राह्मणोंको और विशेष रूपसे संन्यासियोंको अपनी शक्तिकेअनुसार तृप्तिपूर्वक भोजनकराकर पूर्ण सन्तुष्टकरे । और फिर स्वयं भी भगवान् के प्रसाद के स्वरूप में प्राप्त भोजन करे ॥४५॥ हे विष्णो ! शिवके श्रेष्ठभक्तोंको जैसे प्रत्येक प्रहरमें महाशिवरात्रिके दिन विशेष पूजन करनाचाहिए, उसपूजनके विधानको आपको सुनाता हूँ ।४६। हे विष्णुदेव ! पहिले प्रहरमें संस्थापित पार्थिव शिवलिंगका अनेक उपचारोंके द्वारा परम भक्तिपूर्वक अर्चन करे ।४७। सर्वप्रथम पाँचकृत्यों द्वारा शिवकापूजन करे प्रत्येक वस्तुके मन्त्रसे उसें समर्पित करना चाहिए, प्रत्येक द्रव्यका पृथक् २ समर्पण करे ।४८। पूजनके द्रव्योंके समर्पणके साथ प्रत्येक द्रव्यके पश्चाद् जलकी धारा चढ़ानी चाहिए । इसके अनन्तर विद्वान व्रत करने वालेको जलकी धारासे ही समर्पण किये हुए द्रव्यको उतारना चाहिए ॥४९॥

शतमष्टोत्तरं मन्त्रं पठित्वा जलधारया ।
पूजयेच्च शिवं तत्रनिर्गुणं गुणरूपिणम् ॥५०
गुरुदत्तेन मंत्रेण पूजयेद् वृषभध्वजम् ।
अन्यथा नाममंत्रेण पूजयेद्वै सदाशिवम् ॥५१
चन्दनेन विचित्रेण तण्डुलैश्चाप्यखण्डितैः ।
कृष्णैश्चैव तिलैः पूजा कार्या शंभोः परात्मनः ॥५२
कुष्पैश्च शतपत्रैश्च करवीरैस्तथा पुनः ।
अष्टभिर्नाममंत्रैश्चार्पयेत्पुष्पाणि शंकरे ॥५३
भव शर्वस्तथा रुद्रः पुनः पशुपतिस्तथा ।
उग्रो महांस्तथा भीम ईशान इति तानि वै ॥५४
श्रीपूर्वैश्च चतुर्थ्यन्तैर्नामभि पूजयेच्छिवम् ।
पश्चाद् धूपं च दीपं च नैवेद्यं च ततः परम् ॥५५

आद्ये यामे च नैवेद्यं पक्वान्नं कारतेद् बुधः ।
अर्घं च श्रीफलं दत्वा ताम्बूलं च वेदयेत् ।५६।

उस समय एकसौ आठबार 'ॐ नमःशिवाय:' इस परमविख्यात पञ्चाक्षरी मन्त्रको पढ़कर निर्गुण एवं सगुणस्वरूप शिवका पूजनकरना चाहिए ।५०। गुरुसे उपदिष्ट मन्त्रके द्वारा अथवा नाम मन्त्रसे सदाशिवका समर्चन करना चाहिए ।।५१।। शिवका पूजन सुन्दर चन्दन अखण्डित अक्षत (चावल) काले तिलोंसे करना उचित है ।।५२।। कमलके दल, सौर और कनेरसे शिवका पूजन करे और शिव भगवान्के ऊपर शिवके आठों नाम मन्त्रोंके द्वारा पुष्प चढ़ावे ।।५३।। भव, शर्व, रुद्र, पशुपति, महान् भीम, उग्र ईशान-ये शिव भगवानके आठ नाम हैं ।।५४।। 'श्री' पहिले लगाकर नामके आगे चतुर्थी विभक्ति लगावे । तथा 'ॐ श्री भावय नमः इत्यादि वत् सब नामोंसे शिवकी अर्चना करे । इसके पश्चात् धूप, दीप, नैवेद्य आदि चढ़ाना चाहिए ।।५५।। प्रथम प्रहरमें बुद्धिमान् भक्तोंको पक्वान्न सहित नैवेद्यका समर्पण करना चाहिये तथा अर्घ, श्रीफल, विल्व, नारियल चढ़ाकर अन्तमें ताम्बूल समर्पित करे ।।५५।।

नमस्कारं ततो ध्यानं जपःरप्रोक्तो गुरोर्मनोः ।
अन्यथा पञ्चवर्णेन तोषयेत्तेन शंकरम् ।५७।
धेनुमुद्रां प्रदर्श्याय सुजलैस्तर्पणं चरेत् ।
पञ्चब्राह्मणभोजं च कल्पयेद्वै यथाबलम् ।५८।
महोत्सवश्च कर्तव्यो यावद् यामो भवेदिह ।
ततः पूजाफल तस्मै निवेद्य च विसर्जयेत् ।५९।
पुनर्द्वितीये यामे च संकल्पं सुसमाचरेत् ।
अथवैकदैव संकल्प्य कुर्यात्पूजां तथाविधाम् ।६०।
द्रव्यैः पूर्वैस्तथा पूजां कृत्वा धारा समर्पयेत् ।
पूर्वतो द्विगुणं मन्त्रं समुच्चार्यार्चयेच्छिवम् ।६१।
पूर्वैस्तिलयवैश्चाथ कमलैः पूजयेच्छिवम् ।
बिल्वपत्रैर्विशेषेण पूजयेत्परमेश्वरम् ।६२।

अर्घ्यं च बीजपूरेण नैवेद्यं पायसं तथा।
मन्त्रावृत्तिस्तु द्विगुणा पूर्वतोऽपि जनार्दन।६३।

इसके पश्चात् नमस्कार और ध्यान करके गुरूदिष्ट मन्त्रका अथवा मेरे मन्त्रका जापकरना चाहिए। किम्बा पञ्चाक्षरी मन्त्रसे शिवको सन्तुष्ट करे।५७। इसके पश्चात् धेनुमुद्राको प्रदर्शित कर निर्मल जलके द्वारा महेश्वरकी तृप्ति करे और अपनी शक्तिके अनुसार पाँच ब्राह्मणोंको भोजन करावे।५८। इसके पश्चात् शेष जितनाभी समय रहे महोत्सव करता रहे। इसके अनन्तर समस्त पूजाके फलोंको देकर देवका विसर्जन करना चाहिए।५९। यहाँ तक प्रथम प्रहरको पूजा हुई। अब द्वितीय प्रहरके आरम्भमें भली-भाँति सङ्कल्प करे अथवा आरम्भमें एकहीबार सङ्कल्प करे पूजनका आरम्भ करे जोकि पूर्ववत् ही होवे ॥६०॥ पूर्वकी भाँतिही प्रथम द्रव्योंसे पूजाकरके फिर जलकी धारा समर्पित करे। इस दूसरे प्रहरमें प्रथम प्रहरकी अपेक्षा द्विगुण मन्त्रोंकाजाप करते हुए शिवार्चन करना चाहिए ॥६१॥ प्रथम प्रहरके पूजनसे शेष रक्खे हुए तिल, जौ, चावल और कमलोंसे और विशेषरूपसे बिल्वपत्रोंसे सदाशिवका पूजनकरना चाहिए।६२। हे विष्णो! बिजौरा नीबूका अर्घ्य तथा खीरके नैवेद्यका अर्पण करे और पहिलेसे भी दुगुने मन्त्रोंका जाप करना चाहिए ॥६३॥

ततश्च ब्राह्मणानां हि भोज्यसंकल्पमाचरेत्।
अन्यत्सर्वं तथा कुर्याद्यावच्च द्वितयावधि।६४।
यामे प्राप्ते तृतीये च पूर्ववत्पूजन चरेत्।
यवस्थाने च गोधूमाः पुष्पाण्यर्कभवानि च।६५।
धूपैश्च विविधैस्तत्र दीपैर्नानाविधैरपि।
नैवेद्यापूपकैर्विष्णोः शाकैर्नानाविधैरपि।६६।
कृत्वैवं चाथ कपूरैरारातिक्रविधिं चरेत्।
अर्घ्यं च ताडिमं दद्याद् द्विगुणं जपम चरेत्।६७।
ततश्च ब्रह्मभोजस्य संकल्पं च सदक्षिणम्।
उत्सवं पूर्ववत्कुर्याद्यावद्यामावधिर्भवेत्।६८।

यामे चतुर्थ संप्राप्ते कुर्यात्तस्य विसर्जनम् ।
प्रयोगादि पुना कृत्वा पुजां विधिवदाचरेत् ।६६।
माषैः प्रियंगुभिर्मुद्गै सप्तधान्यैस्तथाथवा ।
शङ्खीपुष्पैर्बिल्वपत्रैः पूजयेत्परमेश्वरम् ।७०।

इसके पीछे योग्य ब्राह्मणोंके भोजन करनेका सङ्कल्प करे बाकी सम्पूर्ण पूजनको प्रथमप्रहरके समान द्वितीय प्रहरकी समाप्तितक करता रहे ॥६४॥ यहाँ द्वितीय प्रहरकी अर्चना समाप्त हो जाती हैं और अब तीसरे प्रहरके पूजनका विधान आरम्भहोता है । इस प्रहरमें भी पूर्ववत् पूजनका क्रम करना चाहिये । यज्ञोके स्थानमें गेहूँ तथा आकके पुष्प चढ़ावे ॥६५॥ हे विष्णुदेव ! तीसरे प्रहरमें अनेक तरहकी उत्तम धूप ,बहुतसे दीपक पुआ का नैवेद्य और अनेक भाँतिके शाकोंसे पूजन करे ॥५६॥ इस तरह पूजन करके शिवकी आरती कपूरसे करे । अनारनका अर्घ्य देवे और पहिले की अपेक्षा द्विगुणित मन्त्र जाप करना चाहिए ।६७। इसके अनन्तर दक्षिणाके साथ ब्रह्मभोज करानेका सङ्कल्प करे और तृतीय प्रहरकी समाप्तिके पर्यन्त पहिले की तरह उत्सव करता ही करे ॥६८॥ यह तीसरे प्रहरकी पूजा समाप्त होती है अब चौथेप्रहरकी अर्चन का आरम्भ होजाता है जब चतुर्थ प्रहरकी पूजाका अवसर आवे तो पहिलेका विसर्जनकर देवे और फिर नये सिरेसे आवाहन आदि करके पूर्ण बिधि-विधानसे पूजन करे ॥६९॥ अब उड़द, मूंग, काँगनी अथवा सात धान्यों, शङ्खी-पुष्प और विल्वपत्रोंसे शिवका अर्चन करना चाहिए ॥७॥

नैवेद्यं तत्र दद्याद्वै मधुरैर्विविधैरपि ।
अथवा चैव माषान्नैस्तोषयेच्च सदाशिवम् ।७१।
अर्घं दद्यात्कदल्यश्च फलेनैवाथ वा हरे ।
विविधैश्च फलैश्चैव दद्यादर्घ्यं शिवाय च ।७२।
पूर्वतो द्विगुणं कुर्यान्मन्त्रजापं नरोत्तमः ।
सकल्पं ब्रह्मभोजस्य यथाशक्ति चरेद् बुधः ।७३।
गीतैर्वाद्यैस्तथा नृत्यैर्नयेत्कालं च भक्तितः ।

मयौत्सववैर्भक्तजनैर्यावत्स्यादरुणोदयः ।७४।
उदये च तथा जाते पुनः स्नात्वार्चयेच्छिवम् ।
नानापूजोपहारैश्च स्वाभिषेकमथाचरेत् ।७५।
नानाविधानि दानानि भोज्यं च विविधं तथा ।
ब्राह्मणानां यतीनां च कर्तव्यं यामसंख्यया ।७६।
शंकराय नमस्कृत्यञ्जलिमथाचरेत् ।
प्रार्थयेत्सुस्तुतिं कृत्वा मंत्रैरेतैर्विचक्षणः ।७७।

इसके पश्चात् अनेक प्रकारके मिष्ठान्न नैवेद्योंको शिवके लिये समर्पित करे अथव, उड़दके बने हुए पक्वान्नसे शिवको सन्तुष्ट करना चाहिए ।७१। हे हरे ! इस समय वेलाकी गैरका अर्घ्य देवे किम्बा ऋतुके विविध फलों मे भगवान् शिवको अर्घ्य देना चाहिए ॥७२॥ इसके पश्चात् विद्वान् शिवव्रती व्यक्तिको पहिलेसे दुगुना मन्त्र जापकर अपनी शक्तिके अनुकूल ब्राह्मण-भोजन करानेका सङ्कल्प करना चाहिए ॥७३॥ भक्तिपूर्वक गायन, वाद्य, नर्तन आदिको करते हुए भक्तोंके सहित महान् उत्सवका समारोह अरुणोदय पर्यन्त करके समयके शेष भागको व्यतीतकरना चाहिए ॥७४॥ भुवन भास्करके समुदित होने पर स्नान करके पुनः शिवका अर्चन करना चाहिए । तत्पश्चात् अनेक पूजाके योग्य भेंटोके द्वारा अपना अभिषेक करना चाहिए ॥७५॥ इसके अनन्तर प्रहरोंके अनुसार अर्थात् प्रहरोंकी संख्याके अनुकूल विविध तरहके दान, विभिन्न प्रकारके भोजन ब्राह्मणों तथा संन्यासियोंको अपने सङ्कल्पानुरूप समर्पित करने चाहिए ॥७६॥ इसके पश्चा शिवको प्रणामकर पुष्पाञ्जलि समर्पित करे और फिर सुबुद्धि भक्तको निम्नप्रकारके मन्त्रोंसे प्रार्थना करनी चाहिए ॥७७॥

तावकस्त्वद्गतप्राणस्त्वच्चित्तोऽहं सदा मृड ।
कृपानिधे इति ज्ञात्वा यथा योग्यं तथा कुरु ।७८।
अज्ञानाद्यदि वा ज्ञानाज्जपपूजामिकं मया ।
कृपानिधित्वाज्ज्ञात्वैव भूनाथ प्रसीद मे ।७९।
अनेनैवोपवासेन यज्जातं फलमेव च ।

तैनैव प्रीयतां देवः शंकरः सुखदायकः ८०।
कुले मम महादेव भजनं तेऽस्तु सर्वदा।
माभूत्तस्य कुले जन्म यत्र त्वं न हि देवता।८१।
पुष्पाँजलिं समर्प्यैव तिलकाशिष एव च
गृह्णीयाद् ब्राह्मणेभ्यश्च ततः शम्भुं विसर्जयेत्।८२।
एव ब्रतं कृतं येन तस्माद् दूरो हरो न हि।
न शक्यते फलं वक्तुं नादेयं विद्यते मम।८३।
अनायासतया चेद्वै कृतं व्रतमिद परम्।
तस्य वै मुक्तिबीजं च जातं नात्र विचारणा।८४।

हे कृपानिधे! हे शिवजी! मैं आपका हूँ और आपकेही प्राणों वाला हूँ तथा आपकेही चित्त वाल हूँ - यही समझकर जो भी उचित हो वही आप करें।७८। हे भूतनाथ! मुझ सेवक के द्वारा अज्ञानवश पूजन तथा जप आदि किया गया है उससे आप अपनी स्वाभाविक दयालुता के कारण से मुझ पर प्रसन्नहोवें।७९ इस परमपावन व्रतसे जोभी उत्तम फल होता है। उससे आप सनस्त सुखों के प्रदान करने वाले मुझपर प्रसन्नता करें।८०। हे महादेव! मैं यही चाहता हूँ कि मेरे कुल में सदा आपका भजन पूजन करते रहें और मैं कभीभी ऐसे वशमें न होऊँ जिसमें आपका नाम संकीर्तन न होता हो।८१। इस रीति से निवेदन करके पुष्पाँजलि समर्पित कर ब्राह्मणोंसे आशीर्वाद के तिलोंका ग्रहण करे और इसके अनन्तर शिव का विसर्जन कर देवे।८२। इस प्रकार से जो भी व्रत करते, उनसे भगवान शम्भु कभी दूर नहीं रहा करते हैं। इस व्रतका पूर्ण फल मैं नहीं कह सकया हूँ। ऐसे भक्त को मुझे कुछ भी अदेय वस्तु नहीं होती।८३। यदि बिना कुछ श्रमके भी यह परम श्रेष्ठ व्रत किया गया हो, उसकोभी मोक्ष बीज अवश्य होता है—इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है।८४।

प्रतिमसं वृतं चौव कर्तव्यं भक्तितौ नरैः।
उद्यापनविधिं पश्चात्कृत्वा सांगभलं लभेत्।।८५।
ब्रतस्य करणान्न नं शिवोऽहं सर्वदुःखहा।

ददमि भुक्ति मुक्ति च सर्वा वौ वाञ्छितं फलम् ।८६।
इति शिववचनं निशाम्य विष्णुर्हिततरमद्भुतमाजगाम धाम ।
तदनु व्रतमुत्तमं जनेषु समचरदात्महितेषु चैतदेव ।८७।
कदाचिन्नारदायाथ शिवरात्रिव्रतन्त्विदम् ।
भुक्तिमुक्तिप्रदं दिव्यं कथयामास केशवः ।८८।

ससारमें मनुष्योंका कर्तव्य हैकि शिवदेवको प्रसन्नकरनेके लिये प्रत्येक मासमें चतुर्दशीके दिन इस व्रतको करना चाहिए और भक्तिके साथ पीछे उद्यापन करके पूर्ण अङ्गोंवाला इसके फलका लाभ प्राप्त करे ॥८५॥ इस व्रतके करने वालेका निश्चत रूपसे अवश्यही मैं सारा दुःख दूर भगा देता हूँ और उसे भुक्ति मुक्ति दोनों प्रदानकर सम्पूर्ण अभीप्सित फल दिया करता हूँ ।८६। सूतजीने कहा-भगवान् विष्णुदेव महेश्वरके इस प्रकार के परम हितप्रद बचनोंको श्रवणकर अद्भुत एवं अतुल तेजको प्राप्तहुए और इसके उपरान्त उन्होंने अपने हित चाहने वाले मनुष्योंके निकटमें उपस्थित होकर यह शिवका परम श्रेष्ठ व्रत किया ।८७। एकबार इसी दिव्य शिवके व्रतके विषयमें भगवान् विष्णुने श्रीनारदजी से कहा था कि यह भोग मोक्ष दोनों का देने वाला सर्वोत्तम व्रत है ॥८८॥

॥ शिवरात्रि व्रत का उद्यापन

उद्यापनविधिं ब्रूहि शिवरात्रिव्रतस्य च ।
यत्कृत्वा शंकरः साक्षात्प्रसन्नो भवति ध्रुवम् ।
श्रूयतामृषयो भक्तया तदुद्यापनमादराद् ।
यस्यानुष्ठानतः पूर्णं भवति तद् ध्रुवम् ।२।
चतुर्शाब्दं कर्तव्य शिवरात्रिव्रतं शुभम् ।
एकभक्तं त्रयोदश्यां चतुर्दश्यामुपोषणम् ।३।
शिवरात्रिदिने प्राप्ते मित्य संपाद्य वौ विधिम् ।
शिवालयं ततो गत्वा पूजां कृत्वा यथाविधि ।४।
ततश्च करायेद्दिव्यं मण्डलं तत्र यत्नतः ।

गौरीतिलकनाम्ना वै प्रसिद्धं भुवनत्रये ॥५

तन्मध्ये लेखयेद्दिव्यं लिंगतोभद्रमण्डलम् ।

अथवा सर्वतोभद्रं मण्डपान्तः प्रल्पयेत् ॥६

कुंभास्तत्र प्रकर्तव्याः प्राजापत्यविसंज्ञया ।

सर्वस्त्रा सफलास्तत्र दक्षिणासहिताः शुभ्यः ॥७

ऋषियोंने कहा—अब आप महाशिवरात्रिके व्रतकी उद्यापनकी विधि का वर्णन करें जिसके करने से साक्षात् भगवान् शिव निश्चित रूपसे प्रसन्न होजाया करते हैं ॥१॥ सूतजीने कहा— हे ऋषिगण ! अब आप पूर्ण भक्तिके साथ आदरपूर्वक महाशिवरात्रिके व्रतके उद्यापन करनेके विधान को परम प्रेमपूर्वक श्रवण करो जिसके कर देनेसे यह महाव्रत निश्चय ही पूर्ण हो जाया करता है ॥२॥ इस परम शुभ शिवरात्रिका व्रत चौदहवर्ष तक करना चाहिये । इस व्रतमें त्रयोदशीके दिन एकबार भोजन करे और चतुर्दशीकेदिन उपवास करनाचाहित॥ ३॥ शिवरात्रिके दिन नैत्यिक विधि को समाप्त करके भगवान् शिवके मन्दिरमें जाकर सविधि उनका अर्चन करना चाहिए ॥४॥ इसके अनन्तर भगवान् शम्भुके समीपमें यत्नके साथ दिव्य मण्डलकी रचना करानी चाहिए जिस मण्डल की त्रिभूवनमें गौरी-तिलकके शुभ नामसे ख्याति है ॥५॥ इसके मध्यमें सुन्दर लिंगतोभद्र-मण्डलको बनावे अथवा उस मंडलके अन्दर सर्वतोभद्र चक्रका निर्माण करना चाहिये ॥६॥ उस जगह प्राजापत्यके नामसे वस्त्र फल और दक्षिणा के सहित शुभ घटोंकी स्थापना करे ॥७॥

मण्डलस्य च पार्श्वे वै स्थापनीयाः प्रयत्नतः ।

मध्ये चक्रश्च संस्थाप्यः सोवर्णो वापरो धटः ॥८

तत्रोमासहितां शभुमूर्ति निर्माय हाटकीम् ।

पलेन वा तदर्द्धेन यथाशक्तयाऽथवा व्रती ॥९

निधाय वामभागे तु शिवामूर्तिमतन्द्रितः ।

मदीयां दक्षिणे भागे कृत्वा रात्रौ प्रपूजयेत् ॥१०

आचार्यं वरयेत्तत्रर्चर्त्विग्भिः सहितं शुचिम् ।

अनुज्ञातश्च तैर्भक्तया शिवपूजां समाचरेत् ॥११
रात्रौ जागरण कुर्यात्पूजां यामोद्भवां चरन् ।
रात्रिमाक्रमयेत्सर्वां गीतनृत्यादिना व्रती ॥१२
एवं सम्पूज्य विधिवत्संतोष्य प्रतिरेव च ।
पुनः पूजां ततः कृत्वा हौमं कुर्याद्यथाविधि ॥१३
यथाशक्ति विधान च प्राजाप्रत्यं समाचरेत् ।
ब्राह्मणान्भोजयेत्प्रीत्या दद्याद्दानानि भक्तितः ॥

उस मण्डपके समीप मध्यमें एक या दो सुवर्ण कलशोंकी स्थापना करनी चाहिए जहाँकि शिवके व्रत करनेवाले व्यक्ति एक अथवा आधेपल की सुवर्णकी पार्वतीकेसाथ शिवकीप्रतिमा स्थापित करे ॥८॥९॥ आलस्य का त्यागकर वहाँपर वामभागमें जगदम्बा पार्वतीकी प्रतिमा और दक्षिण भागमें भगवान् शिवकी मूर्तिकी स्थापना सविधिकर रात्रिमें उनका अर्चन करना चाहिए ॥१०॥ उस मण्डप योग्य ऋत्विजों और आचार्यका वरण भी करे जिनकी आज्ञाके अनुसारही भक्ति-भावके साथ शिवकी वन्दनार्चन करना चाहिये ॥११॥ प्रत्येक प्रहरमें पूजन करते हुई रात्रिका जागरण करे और बड़े उत्साहके साथ गीत भजन तथा नृत्य आदिसे उस रात्रिका समय व्यतीत करे ॥१२॥ इस रीतिसे रात्रिको सविधि शिवपूजनकर शिव को सन्तुष्ट करे और फिन प्रातःकालमें पुनः शिवार्चन कर हवन करना चाहिये । १३॥ इस प्रकार अपनी शक्तिके अनुसार प्राजापत्य व्रतका विधान करे और इसके उपरान्म प्रेमपूर्वक ब्रह्मभोज कराके दान देवे । इस समस्त विधानमें पूर्ण भक्तिकी भावना होनी चाहिये ॥१४॥

ऋत्विजश्च सपत्नीकान्वस्त्रालकारभूपणैः ।
अलंकृत्य विधानेन दद्याद्दानं पृथक्पृथक् ॥१५
गां सवत्सां विधानेन यथोपस्करसंयुताम् ।
उक्त्वा चार्याय वै दद्याच्छिवो मे प्रीयतामिति ॥१६
ततः सकुम्भां तन्मूर्ति सवस्त्रां वृषभे स्थिताम् ।
वालंकारसहितामाचार्याय निवेदयेत् ॥१७

ततः संप्रार्थयेद्देवं महेशानं महाप्रभुम् ।
कृतांजलिर्नतस्कन्धः सुप्रीत्या गद्गदाक्षरः ।१८।
देवदेव महादेव शरणागतवत्सल ।
व्रतेनानेन देवेशं कृपां कुरु ममोपरि ।१९।
मया भक्त्यनुसारेण व्रतमेतत्कृतं शिव ।
न्यूनं सम्पूर्णतां यातु प्रासादात्तव शङ्कर ।२०।
अज्ञानाद्यदि वा ज्ञानाज्जपपूजादिकं मया ।
कृतं तदस्तु कृपया सफलं तव शङ्कर ।२१।
एवं पुष्पाञ्जलिं दत्वा शिवाय परमात्मने ।
नमस्कारं ततः कुर्यात्प्रार्थनाँ पुनखे च ।२२।
एवं व्रतं कृतं येन न्यूनं तस्य न विद्यते ।
मनोऽभीष्टां ततः सिद्धिं लभते नात्र संशयः ।२३।

जो वरण किये हुए ऋत्विज हों उन्हें सपत्नीक वस्त्राभूषण आदि से सुसज्जित कर विधिके साथ पृथक् पृथक् उन्हें दान देना चाहिए ।।१५।। सवत्सा दूध देने वाली गौका दान समस्त वस्तुओं के साथ आचार्यको देवे और यह कहकर देना चाहिए कि भगवान्शिव मुझपर प्रसन्न होवें ।।१६।। इसके उपरान्त कलश तथा वस्त्रादिके साथ वृषभपर विराजामान शिवकी प्रतिमाको वस्त्राभूषणों से युक्त आचार्य को समर्पित कर देवे ।।१७।। इसके पश्चात् अपने कन्धोंको नीचेकी ओर झुकाकर विनम्र भावसे दोनों हाथ जोड़कर शिवके समीप गद्गद् वाणी से प्रार्थना करे।१८। हे देवों के देव ! हे महादेव ! हे शरणागत वत्सल ! हे देवेश ! आप अब इस व्रत से मेरे ऊपर प्रसन्नहोकर कृपाकी दृष्टि करें ।।१९।। हे शिव ! भक्तकी भावनाका आश्रयलेकर मैंने इसव्रतको किया है सो हे शङ्कर ! इसमें कुछ न्यूनताभी रह गई हो तो आपकी प्रसन्नता से पूर्णताको प्राप्त हो ।।२०।। हे शङ्कर ! मैंने ज्ञान या अज्ञानसे जो कुछभी आपका पूजन तथा जप आदि किया है सो सब आपकी अपनी कृपासे सफल होवे ।।२१।। इसविधिसे नम्र प्रार्थना के सहित पुष्पोंकी अञ्जलि समर्पित कर शिवको प्रणाम करे ।।२२।। इस

तरह जिसने भी इस व्रतको किया है उसमें कोई भी न्यूनता नहीं रहा करती है और वह शिवव्रती मनकी चाही हुई सिद्धि ही प्राप्त कर लेता है इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है ॥२३॥

व्याध-कथा प्रसंग में शिवरात्रि माहात्म्य वर्णन

सूत ते वचनं श्रुत्वा परानन्दं वयं गताः ।
विस्तरात्कथय प्रीत्या तदेव व्रतमुत्तमम् ।१।
कृतं पुरा च केनेह सूत तद् व्रतमुत्तमम् ।
कृत्वाप्यज्ञानतश्चैव प्राप्तं किं फलमुत्तमम् ।२।
श्रूयतामृषयः सर्वे कथयामि पुरातनम् ।
इतिहासं निषादस्य सर्वपापप्रणाशनम् ।३।
पुरा कश्चिद्वने भिल्लो नाम्ना ह्यासीद् गुरुद्रुहः ।
कुटुम्बी बलवान्क्रूरः क्रूरकर्मपरायणः ।४।
निरन्तरं वने गत्वा मृगान्हन्ति स्म नित्यशः ।
चौर्य्यं च विविधं तत्र करोति स्म वने वसन् ।५।
बाल्यादारभ्य तेनेह कृतं किंचिच्छुभं न हि ।
महान्कालो व्यतीयाय वने तस्य दुरात्मनः ।६।
कदाचिच्छिवरात्रिश्च प्राप्तासीत्तत्र शोभना ।
न दुरात्मा स्म जानाति महष्टननिवासकृत् ।७।

ऋषियोने कहा–हे सूतजी ! आपके बचन सुनकर हम सबको अत्यन्त आनन्द हुआ है । अब आप कृपाकर उसी परम श्रेष्ठ ब्रतको प्रीत-पूर्वक विस्तारसे कहिए।१। हे सूतजी ! इस संसारमें सर्व प्रथम यह व्रत किसने किया था और अज्ञानसे भी इस श्रेष्ठ व्रतको करनेसे क्या फल प्राप्त होता है ? कृपाकर यहसब बताइये।२। सूतजीने कहा-हे ऋषिगण ! इस सम्बन्ध में मैं एक परम प्राचीन तथा समस्त पापोंका नाशक निषादका आख्यान तुमको सुनता हूँ।३। बहुतपहिले पुरानेसमयमें गुरुद्रुह नामसे विख्यात, बहु कुटुम्बी और अतिबलवान् एकभील बनमें रहाकरता था जोकि सर्वदा हत्या आदि करने के बुरेसे बुरे कर्मोमें तत्पर रहता था ॥४॥ उसका यह नित्य

का काम था कि बनमें मृगोंकी शिकार करे और वहाँ आते-जाते लोगोंके धनका अपहरण करे।५। उसने अपने बचपनसे लेकर युवावस्थातक कोई भी शुभ कर्म कभी नहीं किया और इसी रीतिसे वनमें रहते हुऐ उस दुरात्माका बहुत समय व्यतीत हो गया।६। इस तरह रहते हुए उसे शुभ महाशिवरात्रिका समय आ गया किन्तु उस दुष्ट बुद्धिको इस परम पावन दिनका कुछ भी ज्ञान नहीं हुआ ॥७॥

एतस्मिन्समये भिल्लो मात्रा पित्रा स्त्रिया तथा।
प्रार्थितश्च क्षुधाविष्टैर्भक्ष्यं देहि वनेचर।८।
इति संप्रार्थितः सोऽपि धनुरादाय सत्वरम्।
जगाम मृगहिंसार्थं बभ्राम सकलं वनम्।९।
दवयोगात्तदा तेन न प्राप्तं किंचदेव हि।
अस्तं प्राप्तस्तदा सूर्यः स वै दुःखमुपागतः।१०।
किं कर्तव्यं क्व गतव्यं न प्राप्तं मेऽद्य किंचन।
वाल श्च ये गृहे तेषां किं पित्रोश्च भविष्यति।११।
मीदय वै कलत्रं च तस्याः किंचिद् भविष्यति।
किंचिद् गृहीत्वा हि मया गन्तव्यं नान्यथा भवेत्।१२।
इत्थं विचार्य स व्याधो जलाशयसमीपगः।
जलावतरण यत्र तत्र गत्वा स्वयं स्थितन।१३।
अवश्यमत्र कश्चिद्वै जीवश्चैवागमिष्यति।
त हत्वा स्वगृहं प्रीत्या यास्याभि कृतकार्यकः।१४।

उसी समय उसके माता-पिता और पत्नीने उससे कहा—हम भूखसे अत्यन्तही व्याकुल होरहे हैं,हमको कहींसे भोजन दो।८। माता-पिता और पत्नीकी इस बातको सुनकर वह अपना धनुष उठाकर शीघ्रही मृग मारने के लिये घोर वनमें गया और चारों और बहुत घूमा-फिरा किन्तु दैवयोग से उसदिन उसे कुछ शिकार नही मिली। जब सूर्य अस्ताचलगामी होगए तो उसे बड़ी चिन्ता हुई और वह अत्यन्त दुःखित हुआ ॥९-१०॥उसने बनमें सोचा-क्या करूं और अब कहाँ जाऊं ? खेदकी बात है कि आज

मुझे कुछभी भोजनकासाधन नहीं मिला है । में अपने माता-पिताओर पुत्र पत्नीको क्या खिलाऊँगा? ॥११॥ मेरी स्त्री गर्भवती है अतः उसके लिये अवश्यही कुछ खानेकी वस्तु लेजाना आवश्यक है । अतः अब मैं भोजनका सामान लिये बिना घरको नहीं वापिस लौटूंगा।१२। ऐसा विचार करके वह भील एक सरोवरके तटपर जाकर बैठ गया ॥१३॥ उसने सोचा यह जलपीनेका घाट है इसलिये यहाँ अवश्य ही कोई न कोई जीव आवेगा। उसका वध करके सफल होकर ही आनन्दसे घरमें जाऊंगा । १४॥

इति मत्वा स वै वृक्षमेकं विल्वेमिसंज्ञकम् ।
समारुह्य स्थितस्तत्र जलमादाय भिल्लकः ।१५।
कदा यास्यति कश्चिद्वै कदा हन्यामहं पुनः ।
इति बुद्धिं समास्थाय स्थितोऽसौ क्षुत्तृषान्वितः ।१६।
तद्रात्रौ प्रथमे यामे मृगी त्वेका समागत ।
तृषार्ता चकिता सा च प्रोत्फालं कुर्वती तदा ।१७।
तां दृष्ट्वा च तदा तेद तद्वधार्थमथो शरः ।
संहृष्टेन द्रुतं बाणं धनुषि स्वे हि संदधे ।१८।
इत्येवं कुर्वतस्तस्य जलं बिल्वदलानि च ।
पतितानि ह्यधस्तत्र शिवलिंगमभूत्ततः ।१९।
यामस्य प्रथमस्यैव पूजा जाता शिवस्य च ।
तन्महिम्ना हि तस्यैव पातकं गलितं तदा ।२०।
तत्रत्यं चैव तच्छब्दं श्रुत्वां सा हरिणी भिया ।
व्याधं दृष्ट्वा व्याकुलं हि तचनं चेदमब्रवीत् ।२१।

वह भील अपने दिलमें एसा विचार करके जल लेकर एक बेलके वृक्ष पर चढ़ गया ओर वहाँ बैठगया ॥१५॥ कब कोई जीव आवे और कब मैं उसे मारूँ-यही मनमें विचार करके भूखा-प्यासा वह भील वहां प्रतीक्षामें स्थित हो गया ॥१६॥ जब रात्रिका प्रथम प्रहर हो गया तो एक हिरनी प्याससे वेचैन होकर हाँपती हुई वहाँ आई ॥१७॥ हे विष्णुदेव ! उसी मृगीको देखकर उस व्याधको नहुत प्रसन्नता हुई और उसने हिरनीको

मारनेके लिए तुरन्त ही धनुषपर बाण चढ़ा लिया ।१८। धनुष और तीर को साधनेके प्रयत्नमें उनके हाथसे बेलपत्र और जल नीचे गिरगये जहाँकि एक शिवका ज्योतिर्लिङ्ग स्थापित था ।।१९।। इस तरह से अनजाने ही उसके द्वारा अनायास भगवान् शिवके प्रथम प्रहरका अर्चन हो गया। इस महारात्रि में शिव-पूजनके प्रभावसे उसके समस्त पापोंका क्षय हो गया। ।।२०।। उसके धनुषकी ध्वनिको सुनकर और भीलको वधके लिये प्रस्तुत देखकर वह हिरनी अत्यन्त भयभीत होकर उससे कहनी लगी ।२१।

किं कर्तु मिच्छसि व्याध सत्यं वद ममाग्रतः ।
तच्छ्रुत्वा हरिणीवाक्यं व्याधो वचनमब्रवीत् ।२२।
कुटुम्ब क्षुधितं मेऽद्य हत्वा त्वं तर्पयाम्यहम् ।
दारुणं तद्वचः श्रुत्वा दृष्ट्वा तं दुर्द्धरं खलम् ।२३।
किं करोमि क्व गच्छामि ह्युपायं रचयाम्यहम् ।
इत्थ विचार्य्य सा तत्र वचन चेदमब्रवीत् ।२४।
मन्मांसेन सुखं ते स्याद्देहस्यानर्थकारिणः ।
अधिकं किं महत्पुण्यं धन्याहं नात्र संशयः ।२५।
उपकारकरस्यैव यत्पुण्यं जायते त्विह ।
तत्पुण्यं शक्यते नैव वक्तुं वर्षशतैरपि ।२६।
परं तु शिशवो मेऽद्य वर्तन्ते स्वाश्रमेऽखिलाः ।
भगिन्यौ तान्समर्प्यैव प्रायास्ये स्वामिनेऽथवा ।२७।
न मे मिथ्यावचस्त्वं हि विजानीहि वनेचर ।
आयास्येह पुनश्चाहं समीप ते न सशयः ।२८।

हिरनीने कहा-हे व्याध ! तुम्हारी क्या करनेकी इच्छा है ? मेरे सामने अपना सत्य विचार प्रगट करो, मृगीकी इस बातको सुनकर वह भील कहने लगा ।।२२।। व्याधने कहा-आज मेरा समस्त कुटुम्ब भूखा है, तुझे मारकर अपने परिवार वालोंके प्राणोंकी रक्षा करूँगा। भीलके इस उत्तर को सुनकर और भीषण व्याध के स्वरूप को देखकर हिरनी अपने मन में सोचने लगी ।२३। इस प्राणोंकी बाधाका समय उपस्थित होजानेपरमैं कहाँ

जाऊं और क्या करूं ! अच्छा कोई उपायरचता हूँ-ऐसा मनमें विचारकरके उसने कहा-।२४। मृगीने कहा-आज महान् अनर्थ करनेवाले इसमेरे शरीर से यदि आपको सुखमिले तो मेरा इससे अधिक और क्या महान् पुण्य हो सकता है । मैं आज बिना किसी संदेहके निश्चय ही बड़ी भाग्यशालिनी हूँ ।२५। इसलोकमें उपकार करनेवाले प्राणिका जितना पुण्य होता है उसका वर्णन एक सौ वर्ष में भी नहीं किया जा सकता है ।।२६।। किन्तु केवल यही प्रार्थना हैकि इस समय मेरे सबबच्चे अपने स्थानमें अकेले हैं मैं उन्हें अपनी भगिनी अथवा स्वामीके पास सौंपकर तुरन्त आपके समीप में आ जाऊंगी ।२७। हे वनचर ! आप मेरे इस वचनको असत्य मत मानना, मैं तुम्हारे पास निश्चय ही आऊँगी-इसमें कुछ सन्देह नहीं ।२८।

स्थिता सत्येन धरणी सत्येनैव च वारधिः ।
सत्येन जलधाराश्च सत्ये सर्वं प्रतिष्ठितम् ।२९।
इत्युक्तोऽपि तथा व्याधो न मेने तद्वचो यदा ।
तदा सुविस्मिता भीता वचन साब्रवीन्पुनः ।३०।
शृणु व्याधप्रवक्ष्यामि शपथ हि करोम्यहम् ।
अगच्छेयं यथा ते न समीप स्वगृहाद्गता ।३१।
ब्राह्मणो वेदविक्रेता सन्ध्याहीनस्त्रिकालकम् ।
स्त्रियः स्वस्वामिनो ह्याज्ञां उल्लंध्य क्रियान्वितः ।३२।
कृतघ्ने चैव यत्पापं यत्पाप विमुखे हरेः ।
द्रोहिणश्चैव यत्पापं यत्पाप धर्मलघने ।३३।
विश्वासघातके यच्च तथा वै छलकर्तार ।
तेन पापेन लिम्पामि यद्यह नागमे पुनः ।३४।
इत्याद्यनेकशपथं मृगी कृत्वा स्थिता यदा ।
तदा व्याधः स विश्वस्य गच्छेति गृहमब्रवीत् ।३५।
मृगी हृष्टा जलं पीत्वा गता स्वाश्रममण्डलम् ।
तावच्च प्रथमो यामस्तस्य निद्रां विना गत ।३६।

सत्यके प्रभावसे यह भूमि स्थित है और सत्य ही से सागर तथा जल

धारा स्थित है, निष्कषार्थ यही है कि सत्यमें सभी कुछ स्थित है।२९।सूतजी ने कहा-उस हिरनीकी ऐसी प्रार्थना सुनकर भी व्याधने नहीं माना तो वह अति आश्चर्यान्वित होकर बहुत डर गई और उसने फिर कहा ॥३०॥ मृगीने कहा-हे व्याध मैं जो भी कुछ निवेदन करती हूँ उसे आप सुनो मैं आपके समक्षमें शपथ खाकर कहती हूँ कि मैं अपने बचनकापालन अवश्य करूंगी अर्थात् मैं अवश्य ही वापिस आऊंगी। ३१॥ वेदों के बेचने वाले और त्रिकालमें सन्ध्या न करनेवाले ब्राह्मणकोजो पापहोता है तथा कामों में आसक्त हुई स्त्रियों को अपने स्वामी की आज्ञाके उल्लंघन में जो पाप होता है एवं विश्वास घात करने वाले-कृतघ्नी-छल करने वाले और शिवसे विमुख रहने वालेको जोभी पाप होता है और धर्मको तोड़ने वाले को जोभी पातक लगता है मैं भी उसी पापकी भागिनी होऊंगी यदि मैं कहकर आपके पास लौटकर वापिस न आऊं ॥३२-३३-३४॥ इस तरह बहुत सी शपथ खाकर वह जब स्थित हुई तो व्याधने हिरनी से कहा, मैं विश्वास करता हूँ तू चली जा ॥३५॥ इसके पश्चात् जब तक वह हिरनी जल पीकर प्रसन्न हो अपने स्थानको गई तब तक प्रथम प्रहर बिना नींद लिये उस व्याधका व्यतीत हो गया ॥३६॥

तदीया भगिनी या वै मृगी च परिभाविता।
तस्या मार्ग विचिन्वन्तो ह्याजगाम जलार्थिनी।३७।
तां दृष्ट्वा च स्वयं भिल्लोऽकार्षीद् वाणस्य कर्षणम्
पूर्ववज्जलपत्राणि पतितानि शिवोपरि।३८।
यामस्य च द्वितीयस्य तेन शम्भोर्महात्मनः।
पूजा जाता प्रसगेन व्याधस्य सुखदायिनी।३९।
मृगी सा प्राह तं दृष्ट्वा किं करोषि वनेचर।
पूर्ववत्कथितं तेव तच्छुत्वाऽहं मृगी पुनः।४०।
धन्याऽहंव्रूयतां व्याध सफलं देहधारणम्।
अनित्येन शरीरेण ह्युपकारो भवष्यति।४१।
परन्तु मम बालाश्च गृहे तिष्टन्ति चार्भकाः।
भर्त्रै तांश्च समर्प्यैव ह्यागमिष्याम्यहं पुनः।४२।

इसके उपरान्त मृगीकी एक दूसरी बहिन उसकी खोज करने हुई जलपीनेको वहाँ आ पहुँची ।।३७।। इस दूसरी हिरनी को देखकर भीलने इसका वध करनेके लिए फिर ज्यों ही धनुष खींचा कि उसके हाथसे पुनः पूर्ववत् बेलपत्र और जल शिव लिंग पर गिर पड़े ।।३८।। यह इस प्रकारसे द्वितीय प्रहरका शिवार्चन व्याध का अनजाने ही सुसम्पन्न हो गया जो कि महान् सुख देनेवाला होता है ।।३९।। उस समय वह हिरनी भीलको देख कर कहने लगी-यह आप क्या करना चाहते हैं ? व्याध ने पूर्ववत् उसके वध करने का उत्तर दिया। यह सुनकर मृगी कहने लगी ।।४०।। मृगीने कहा-हे व्याध मैं परम धन्य हूँ, मेरा यह शरीर धारण करना आज सफल हो गया क्योंकि इस नाशवान् मेरे शरीर से आपका उपकार होगा-परन्तु केवल छोटीसी प्रार्थना यही है कि मेरे बच्चे सब एकाकी घर पर मेरी प्रतीक्षामें होंगे, मैं उन्हें अपने स्वामीके सुपर्द कर आऊं और फिर आपके समीप बहुत शीघ्र वापिस आती हूँ ।।४१-४२।।

त्वया चोक्तं न मन्येऽहं हन्मि त्वां नात्र संशयः ।
तच्छ्रुत्वा हरिणी प्राह शपथं कुर्वती हरे ।४३।
श्रृणु व्याध प्रवक्ष्यामि नागच्छेयं पुनर्यदि ।
वाचा विचलितो यस्तु सुकृतं तेन हारितम् ।४४।
परिणीतां स्त्रियं हित्वा गच्छत्यन्यां च यः पुनाम् ।
वेदधर्मं समुल्लंघ्य कल्पितेन च तो ब्रजेत् ।४५।
विष्णुभक्तिसमायुक्तः शिवनिन्दां करोति यः ।
पित्रो क्षयाहमासाध शून्यं चौवाक्रमेदिह ।४६।
कृत्वा च परितापं हि करोति वचनं पुनः ।
तेन पापेन लिम्पामि नागच्छेय पुनर्यदि ।४७।
इत्युक्तश्च तथा व्याधो गच्छेत्याह मृगीं च सः ।
सा मृगी च जलं पीत्वा हृष्टाऽगच्छत्स्वमाश्रमम् ।४८।
तावद् द्वितीयो यामो वै तस्य निद्रां बिना गतः ।
एतस्मिन्समये तत्र प्राप्ते यामे तृतीयके ।४९।

मीलने कहा यह तेरा कथन मैं नहीं मान सकता-मैं अब अवश्यही मारूंगा, इसमें कुछभी सन्देह नहीं है। हे हरे! यह व्याधके वचन सुनकर वह मृगी शपथ करती हुई कहने लगी।४३। मृगीने कहा-हे व्याध! यदि मैं वापिस लौटकर आपके समीप न आऊं तो वचन के विधान से मेरा समस्त पुण्य चला जायगा।४४। जो मनुष्य अपनी विवाहिता पत्नी का त्यागकर अन्य स्त्री से भोग करता हैतथा जो वेद विहित धर्मका उल्लंघन करके कल्पित मार्गका अनुगमन करता है-जो विष्णु भक्त बनकर शिव की निन्दा करता है, जो माता-पिता की दाह तिथि को बिना ब्राह्मण भोजनके खाली जाने देता है, जो दूसरेको दुख:देकर पीछे मधुर बचन बोलता है मैं उस पापसे लिप्त हो जाऊं यदि मैं वापिस लौटकर आपके पास न आऊं।४५-४६। सूतजी ने कहा—उस भील ने इस तरह शपथ पूर्वक कहने पर मृगीसे कहा—'तू चली जा'। तब वह मृगी परम प्रसन्न होकर जल पान करके अपने घर चली गई।४७। तब तक उस व्याध को विना निद्रा लिये दूसरा प्रहर व्यतीत हो गया और फिर तीसरे प्रहर के आरम्भ होने पर उसने देखाकि वे हिरनियाँ वापिस नहीं आई हैं।४९।

ज्ञात्वा विलबं चकितस्तदन्वेषणातत्पर:।
तद्यामे मृगमद्राक्षीज्जलमार्गगतं ततः।५०।
पुष्टं मृगं तं दृष्ट्वा हृष्टो वनचरः स वै।
शरं धनुषि संधाय हन्तुं तं हि प्रचक्रमे।५१।
तदैवं कुर्वतस्तस्य बिल्वपत्राणि कानिचित्।
तत्प्रारब्धवशाद्विष्णो पतितानि शिवोपरि।५२।
तेन तृतीययामस्य तदात्रौ तस्य भाग्यतः।
पूजा जाता शिवस्यैव कृपालुत्वं प्रदर्शितम्।५३।
श्रुत्वा तत्र च तं शब्दं किं करोषीति प्राह सः।
कुटुम्बार्थमहं हन्मि त्वां व्याधश्चेति सोऽब्रबीत्।५४।
तच्छ्रुत्वा व्याधवचनं हरिणो हृष्टमानसः।
द्रुतमेव च तं व्याधं वचनं चेदमब्रवीत्।५५।

धन्योऽहं पुष्टिमानद्य भवत्तृप्तिर्भविष्यति।
यम्यांगं नोपकारार्थं तस्य सर्वं वृथा गतम् ॥५६

हिरनियों के वापिस आने में विलम्ब देखकर व्याध चकित होकर उनकी खोज करनेमें तत्पर होगया किन्तु उसी समय उसने जलके मार्गमें आता हुआ एक हिरण देखा ॥५० । उस परम पुष्ट शरीर वाले हिरणको देखकर व्याधने अपने धनुष पर वाण चढ़ा लिया और वह उसका वध करनेको उद्यत होगया ॥५१॥ हे विष्णुदेव ! जब उसने धनुष-वाणका सन्धान किया तो भाग्यवश कुछ बेलपत्र शिवके ऊपर उसके हाथसे गिर गये । उसने उस रात्रिमें भीलके भाग्यसे तीसरे प्रहरकी शिवकी पूजा सम्पन्न होगई । इस तरह उस व्याध पर शिवने अपनी कृपालुता दिखलाई थी ॥५२।५३॥ धनुषके शब्दको सुनकर मृगने कहा—हे भील ! यह तुम क्या कर रहे हो ! व्याधने कहा—मैं अपने कुटुम्बके पोषणके लिये तुझे मारना चाहता हुँ॥५४॥यह भीलके वचन सुनकर हिरन परमप्रसन्न चित्तसे व्याधसे कहने लगा—॥५५॥ मृगने कहा-मैं आज अतिशय धन्य भाग्य वाला हूं, मैं पुष्टि वाला हूँ क्योंकि मेरे शरीरसे आपकी तृप्ति होगी । जिसके शीरीरसे दूसरेका कोई उपकार नहीं बनता, उसका शरीर धारण करना ही सर्वथा निष्फल है ॥५६॥

यो वै सामर्थ्ययुक्तश्च नोपकारं करोति वै
तत्सामर्थ्यं भवेद् व्यर्थं परत्र नरकं ब्रजेत् ॥५७
परन्तु बालकान् स्वांश्च समर्प्य जननी शिशून ।
आश्वास्याप्यथ तान् सर्वानागमिष्याम्यहं पुनः ॥५८
इत्युक्तस्तेन स व्याधो विस्मतोऽतीब चेतसिः ।
मताक् शुद्धमना नष्टपापपुञ्जो वचोब्रवीत् ॥५९
ये य समागताश्चात्र ते ते सर्वे त्वया यथा ।
कथयित्वा गता ह्यत्र नायान्त्यद्यापि बन्धका ॥६०
त्वं चापि सङ्कटे प्राप्तो व्यलीकं गमिष्यसि ।
मम संजीवनं चाद्य भविष्यति कथं मुधा ॥६१

श्रृणु व्याथ प्रवक्ष्यामि नानृतं विद्यते मयि ।
सत्येन सर्व ब्रह्माण्डं तिष्ठत्येव चराचरम् ॥६२
यस्य वाणी व्यलीका हि तत्पुण्यं गलित क्षणात् ।
तथापि श्रृणु वै सत्यां प्रतिज्ञां मम भिल्लक ॥६३

जिस प्राणी में सामर्थ्य हो और उससे वह दूसरों की भलाई नहीं करता है तो उसकी समस्तसमर्थता व्यर्थही है । ऐसाप्राणी परलोकमें नरक का गामी होता है ॥५७॥ किन्तु सिर्फ कुछक्षण आपसे चाहता हुँकि अपने बालकोंको माताको सोंपतेहुए धीरजबंधाकर शीघ्र आपकी सेवामेंउपस्थित हो सकूं ।५८। मृगके इस तरह कथनसे व्याधको बड़ा आश्चर्य हुआ और शिवार्चनके प्रभावसे कुछ मनकी शुद्धि हो जानेसे तथा पापोंका क्षय होनेसे उस भीलने कहा—॥५९॥ व्याधने कहा–हे मृग जो-जो भी जीव यहाँ आये सब तेरी भाँतिही कहकर यहाँसे चलेगये और वे सब अभी तकभी वापिस नहीं आये हैं ।६०। हे मृग ! उसी तरह तू भी प्राण सङ्कटमें प्राप्त होकर असत्य का आश्रय लेकर समय निकालेगा, तू ही बता ! मेरा जीवन इस तरह कैसे रहेगा । ॥६१॥ मृगने कहा-हे व्याध ! मैं जो कुछ भी आपसे कहता हूं उसेआप सुनिये । मैं कभी असत्य नहीं बोलता हूं । सत्यके प्रवल प्रभावसे ही यह चराचरमय समस्तब्रह्माण्ड स्थित होरहा है ।६२। जिसकी वाणीमें असत्यता रहती है उसका सारा पुण्य तुरन्त ही नष्ट होजाता है । हे भील ! अब आप मेरी सत्यतापूर्ण प्रतिज्ञाका श्रवण करिये ॥६३॥

सन्ध्यायां मैथुने धस्रे शिवरात्र्यां च भोजन ।
कूटसाक्ष्ये न्यासंहारे सन्ध्याहीने द्विजे तथा ॥६४
शिवहीनं मुख यस्य नोपकर्ता क्षमोऽपि सन् ।
पर्वणि श्रीफलस्यैव त्रोटनेऽभक्ष्यभक्षणे ॥६५
असपूज्य शिवं भस्मरहितश्चान्नभुक् च यः ।
एतेषां पातकं मे स्यान्नागच्छेयं पुनर्यदि ॥६६
इति श्रुत्वा वचस्तस्य गच्छ शीघ्रं समाव्रज ।
स व्याधेनैवमुक्तस्तु जलं पीत्वा गतो मृगः ॥६७

ते सर्वे मिलितास्तत्र स्वाश्रमे कृतसुप्रणाः ।
धृत्तांतं चैव तं सर्वं श्रुत्वा सम्यक् परस्परम् ।५८।
गन्तध्य निश्चयेनेति सत्यपाशेन यंत्रिताः ।
आश्वास्या बालकांस्तत्र गन्तुमुत्कण्ठितास्तदा ।६९।
मृगी ज्येष्टा च या तत्र स्वामिनं वाक्यमब्रवीद् ।
त्वां विना बालका ह्यत्र कथं स्थास्यन्ति वै मृग ।७०।

संध्याके समय मैथुनकरनेसे,शिवरात्रिको दिनमें भोजन करनेसे झूँठी गवाही देनेसे, किसीकी रक्खी हुई धरोहरको मारकर पचा जानेसे तथा ब्राह्मण को सन्ध्यावन्दन न करने से जो पाप होता है तथा जिसका मुख शिव भजनसे रहित है,जो सर्वसमर्थ होकरभी उपकार नहीं करता है, पर्व के दिन बेल तोड़ने और अभक्ष्यका भक्षण करनेसे, शिवार्चनके पूर्व भोजन करनेसे, भस्म रहित अङ्ग रहनेसे जो जो महापातक होते हैं वे सभी मुझे लगें अगर मैं वचनदेकर आपके पास वापिस न आऊं ।६४। ६६।श्रीशिवने कहा—ऐसे उस मृगके बचनों को सुनककर व्याधने कहा—'चले जाओ' शीघ्र वापिस आना'। तब वह हिरन जल पीकर सकुशल अपने निवास स्थानपर चला गया ।६७। इसके उपरान्त वे सब हिरनी और हिरन अपने रहनेके स्थानमें एकत्रितहोकर मिले औरएकदूसरेने परस्परमें प्रणाम करके व्याघ्र की वातचीतका समस्त हाल कहा और सुना, फिर वे कहने लगे ।६८। हम सबको अवश्यही अब वहाँ उस व्याधके पास जानाही चाहिए। इस प्रकार सत्य पाशके बन्धनमें बंधे हुए उन्होंने अपने बच्चोंको धीरज बंधाकर वहाँ जानेका निश्चय किया ।६८। उनमें जो सबसेबड़ी हिरनी थी उसने अपने पतिसे कहा—हे मृग ! आपके बिना ये बच्चे वहाँ कैसे रह सकेंगे ।७०।

प्रथमं ते मया तत्र प्रतिज्ञा च कृता प्रभो ।
तस्मान्मया च गन्तव्यं भवद्भ्यां स्थीयतामिह ।७१।
इति तद्वचनं श्रुत्वा कनिष्टा वाक्यमब्रवीत् ।
अहं त्वेत्सेविका चाद्य गच्छामि स्थीयतां त्वया ।७२।
तच्छ्रुत्वा च मृगः प्राह गम्यते तत्र वै मया ।
भवत्यौ तिष्टतां चात्र मातृतः शिशुरक्षणम् ।७३।

तत्स्वामिवचनं श्रुत्वा मेनाते तन्न धर्मतः ।
प्रोचुः प्रीत्या स्वभर्तारं वैधव्ये जीवितं च धिक् ।७४।
बालानाश्वास्य तांस्तत्र समर्प्य सहवासिनः ।
गतास्ते सर्व एवाशु यत्रास्ते व्याधसत्तमः ।७५।
ते वाला अपि सर्वे वै विलोक्यानु समागताः ।
एतेषां या गतिः स्याद्वै ह्यस्माकं सा भवत्विति ।७६।
तान् दृष्ट्वा हर्षितो व्याधो वाणं धनुषि संदधे ।
पुनश्च जलपत्राणि पतितानि शिवोपरि ।७७।
तन जाता चतुर्थस्य पूजा यामस्य वै शुभा ।
तस्य पाप तदा सर्वं भस्मसादभवत् क्षणात् ।७८।

हे पतिदेव ! सबसे प्रथम मैंने ही वहाँ पहुँचने का बचन दिया है । इसलिये मुझे वहाँ पहुँच जाना चाहिए । आप दोनों यहाँपर ही रहें ।७१। बड़ी मृगीके इस बचन को सुनकर सबसे छोटी कहने लगी-मैं तो आपकी टहलनी हूँ । मैं वहाँ जाती हूँ । आप सब यहीं रहें ।७२। मृगियों के यह बचन सुनकर हिरन ने कहा मैं जाता हूँ, तुम सब यहाँ रहो क्योंकि बच्चों की रक्षा करने वाली माता ही हुआ करती है ।७३। अपने पति के बचन श्रवणकर उन दोनों मृगियोंने अपने धर्मका ध्यानकरते हुए उस बातको न स्वीकार कर प्रेमके साथ पतिसे कहा-वैधव्यमें जीना स्त्रीके लिये धिक्कार जैसा है ।७४। इस तरह बातचीत करके अपने बच्चोंको धीरज देकर पड़ौसियोंके सुपर्दकरते हुए सभी वहाँ चलेगये जहाँ व्याध बैठा था ।७५। पीछेसे सबबच्चे भी वहीं चल दिये और मनमें ठानलिया कि हमारे माता-पिता की जो दशा होगी वही दशा हमभी भोग लेंगे ।७६। उससमय उन सबको आये हुए देखकर व्याध मनमें बहुतही प्रसन्न होते हुए अपने धनुषपर वाण चढ़ाने लगा । उस समय भी उसके धनुषके सन्धान करनेमें हाथसे शिवकी मूर्तिपर जल तथा बेलपत्र गिर गये ।७७। इससे भगवानशिवके चौथे प्रहर का भी अर्चन सम्पन्न होगया और इसके प्रभावसे व्याधके समस्त पापोंका समूल विनाश हो गया ।।७८।।

मृगी मृगी मृगश्चोचुः शीघ्रं वै व्याधसत्तम ।
अस्माकं सार्थकं देह कुरु त्वं हि कृपा कुरु ।७९।
इति तेषां वचः श्रुत्वा व्याधो विस्मयमागतः ।
शिवपूजाप्रभावेण ज्ञानं दुर्लभमाप्तवान् ।८०।
एते धन्या मृगाश्चैव ज्ञानहीनाः सुसंमताः ।
स्वीयेनव शरीरेण परोपकरणे रताः ।८१।
मानुष्यं जन्म सप्राप्य साधितं कि मयाधुना ।
परकीय च सपीडय शरीर पोषितं मया । ८२
कुटुम्ब पोषितं नित्यं कृत्वा पापन्यनेकशः ।
एवं पापानि हा कृत्वा का गतिर्मे भविष्यतिः ।८३।
कां वा गतिं गमिष्यामि पातकं जन्मतः कृतम् ।
इदानीं चिन्तयाम्येवं धिग्धिक् जीवनं मम ।८४।

उस समय वहाँ पहुँचकर मृग और मृगी शीघ्र व्याधसे बोले-हे व्याध श्रेष्ठ ! अब आप हमारे सबके शरीरोंको सार्थक बनादो और कृपा करो । ।७९। शिवने कहा—उन सबके इन बचनों को सुनकर उस भील को बड़ा विस्मय हुआ और शिवपूजनके प्रभावसे उसे देव-दुर्लभ ज्ञानप्राप्त होगया । ।८०। उसने मनमें सोचा-परस्पर मिले हुए ज्ञान रहित इस पशु योनि में उत्पन्न मृग परम धन्य हैं जो अपनेनश्वर शरीरसे परोपकार करनेमेंतत्पर होरहे हैं ।८१। इस मनुष्य देह को प्राप्तकर मैंने क्या फल प्राप्तकिया, जो दूसरे प्राणियोंके शरीरको पीड़ा देकर जन्मभर अपना शरीर पाला ।८२। मेंने सदा बहुतसे पापकर्म करके अपने कुटुम्बका पालन किया ! ऐसे-ऐसे बुरे पापकर्म करने वाले मेरी क्या गति होगी ।८३। मैं नहीं समझता मेरी क्या दुर्गति होगी । क्योंकि जन्मसे ही पाप कर्म किये आज मैं ऐसी चिन्ता कर रहा हूँ । मेरे जीवनको धिक्कार है !।८४।

इति ज्ञान समापन्नो वाणं संवारयंस्तदा ।
गम्यतां च मृगश्रेष्टा धन्याः स्थ इति चाब्रवीत् ।८५।
इत्युक्ते च तदा तेन प्रसन्नः शङ्करस्तदा ।
पूजितं च स्वरूपं हि दर्शयामास समतम् ।८६।

संस्पृश्य कृपया शम्भुस्त व्याधं प्रीतितोऽब्रवीत् ।
वरं ब्रूहि प्रसन्नोऽस्मि व्रतेनानेन भिल्लक ।८७।
व्याधोऽपि शिवरूपं च दृष्ट्वा मुक्तोऽभवत्क्षणात् ।
पपात शिवपादाग्रे सर्वं प्राप्तमिति ब्रुवन ।८८।
शिवोऽपि प्रसन्नात्मा नाम दत्वा गुहेति च ।
विलोक्य तं कृपादृष्ट्या तस्मै दिव्यान्वरानदात् ।८९।
श्रृणु व्याधाद्य भागांस्त्वं भुंक्ष्व दिव्यान्यथेप्सितान् ।
राजधानीं समाश्रित्य श्रृङ्गवेरपुरे पराम् ।९०।
अपनाया वंशवृद्धिः श्लाघनीयः सुरैरपि ।
गृहे रामस्तव व्याध समायास्यति निश्चितम् ।९१।

इस तरह ज्ञानके उदयसे सद्विचार वाले उस व्याधने धनुषसे वाण हटालिया और कहने लगा-हे मृगबरो ! तुम सब परमधन्य एवं सत्यनिष्ठ हो, अब आप सब अपने निवासस्थानको चलेजाओ ।८५। शिवजीने कहा-उससमय जब उसभीलने मृगोंसे यह कहा तो भगवान्‌शंकर बहुतही प्रसन्न हुए औरफिर उन्होंने उसभीलको शास्त्रानुमत अपना पूज्यस्वरूप दिखलाया ।।८६।। शिव कृपासे पूर्ण होकर भीलके शरीरको हाथसे स्पर्श करते हुए प्रीतिपूर्वक वाले-हे भील ! मैं तेरे इसव्रत एवं जागरण तथा अर्चनसेबहुत ही प्रसन्न और सन्तुष्ट हूँ, तू अब वर माँग ले ।।८७।। तब भगवान् शिवके स्वरूपका दर्शनकर व्याधभी क्षणमात्रमें मुक्तहोगया और 'हे भगवन् मैंने सभी कुछ प्राप्तकर लिया -यह कहते हुए शिवके चरणोंमें गिर पड़ा ।८८। अत्यम्त प्रसन्न शिवने उसका 'गुह'-यह नाम देकर कृपाभरी दृष्टिसे देखते हुए उसे दिव्य वरदान दिये ।८९। शिवजीने कहा-हे व्याधर्षे ! अब तू मनोऽभिलषत दिव्य भोगोंका उपभोगकर तथा शृगवेरपुरमें अपनी उत्तम राजधानी बनाकर वहाँ राजाके रूपमें निवासकर ।९०। हे व्याध ! तुम्हारी वंशवृद्धि कभी नाशको प्राप्त नहीं होगी और उसकी प्रशंसा देवगण भी करेंगे। नेतामें भगवान् श्रीरामचन्द्रजी साक्षात् तुम्हारे घर पर पधारेंगे इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है ।९१।

करिष्यति त्वया मैत्री मद्भक्तसहकारकः ।
मत्सेवासक्तचेतास्त्वं मुक्ति यास्यसि दुर्लभाम् ।९२।
एतस्मिन्नन्तरे ते तु कृत्वा शङ्करदर्शनम् ।
सर्वे प्रणम्य सन्मुक्ति मृगयोनेः प्रपेदिरे ।९३।
विमान च समारुह्य दिव्यदेहा गतास्तदा ।
शिवदर्शनमात्रेण शापान्मुक्ता दिवं गता ।९४।
व्याधेश्वरः शिवो जातः पर्वते ह्यर्बुदाचले ।
दर्शनात्पूजनात्सद्यो मुक्ति मुक्तिप्रदायकः ।९५।
व्याधोऽपि तद्दिमान्नून भोग्रान्स सुरसत्तम ।
भुक्त्वा रामकृपां प्राप्य शिवसायुज्यमाप्तवान् ।९६।
अज्ञानत्स व्रतञ्जैतत्कृत्वा सायुज्यमाप्तवान् ।
किं पुनर्भक्तिसम्पन्ना यान्ति तन्मयतां शुभाम् ।९७।
विचार्य सर्वशास्त्राणि धर्मांश्चैवाप्यनेकशः ।
शिवरात्रिव्रतमिदं सर्वोत्कृष्टं प्रकीर्तितम् ।९८।

मेरे भक्तोंपर विशेष कृपा वाले श्रीराम तुम्हारे साथ मैत्री भाव रक्खेंगे और तुम मेरी सेवामें चित्तलगाकर दुर्लभ मोक्षपदको प्राप्तकरोगे ।९२। इसी समयमें उन मृग और मृगीने भी साक्षत् शिव के दर्शन प्राप्त किये और उनको प्रणामकरके वे भी मुक्तहोगये । उनकी वह मृगयोनि छूट गई ।९३। फिर वे दिव्यदेह धारण करके विमानारूढ़ होकर शिवके दर्शन मात्रसे शापसे छुटकारा पा गये और शिव लोकके दिव्य धाम में चले गये ।९४। उस समयसे अर्बुदाचलको मुक्त करनेवाले शिव 'व्याधेश्वर' इसनाम से प्रसिद्धहोकर स्थापित होगये और और वे दर्शनार्चनसे मनुष्योंको तुरन्त भोग-मोक्ष प्रदान किया करते हैं ।९५। हे देवोंमें श्रेष्ठ ! उस समय से वह भीलभी संसारके समस्त भोगोंको भोगकर श्रीरामचन्द्रकी कृपासे शिवको सायुज्य मुक्तिके पदको प्राप्त हो गया ।९६। भीलने तो अज्ञान से शिवका व्रतकिया और विवशतामें व्रत बनगड़ा तब उसे भुक्ति मुक्तिमिलगई तोजो भक्तिवाले इसकेद्वारा शुभगतिको पालेवें तो क्या आश्चर्यकी बात है ।९७।

सम्पूर्ण शास्त्रोंका मंथन कर और विविध धर्मोंका विवेचन करके सर्वोत्तम महाशिवरात्रिके व्रतको बतलाया गया है ॥९८॥

व्रतानि विधिधान्यत्र तीर्थानि विविधानि च ।
दानानि क विचित्राणि मखाश्च विविधास्तथा ॥९९
तपांसि विविधान्येव जपाश्चैवाप्यनेकशः ।
नैतेन समतां यान्ति शिवरात्रिव्रतेन च ॥१००
तस्माच्छुभतरं चैतत्कर्तव्यं हितमीप्सुभिः ।
शिवरात्रिव्रतं दिव्यं भुक्ति मुक्तिप्रद सदा ।१०१
एतत्सर्वं समाख्यातं शिवरात्रिव्रत शुभम् ।
ब्रतराजेति विख्यात किमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ॥१०२

यों तो इस लोक में विविध व्रत, अनेक तीर्थ, सैकड़ों प्रकार से दान बहुत से यज्ञ नाना भाँतिके तप एवम् जप हैं परन्तु इस महाशिवरात्रि के व्रतोपवास तथा शिवार्चनकी समताको कोईभी प्राप्तनहीं होसकते हैं ।९९-१००॥इसीलिये अपना कल्याणचाहने वालोंको यह परमश्रेष्ठ,भोग-मोक्ष का दाता शिवरात्रि का व्रत अवश्यही करनाचाहिए ।१०१।अब तक हमने शिवरात्रिके व्रतका आख्यान और महान्फल भली भाँति बतला दिया है । यह सबव्रतोंमें श्रेष्ठ होनेके कारण ही 'व्रतराज' कहा है। अब और आप क्या श्रवण करना चाहते हैं ॥१०२॥

॥ मुक्ति निरूपण ॥

मुक्तिर्नाम त्वया प्रोक्ता तस्यां किं नु भवेदिह ।
अवस्था कीदृशी भवेदिति सर्वं वदस्व नः ॥१
मक्तिश्चर्विधा प्रोक्ता श्रूयतां कथयामि वः ।
संसारक्लेशसंहर्त्री परमानन्ददायिनी ।२।
सारूप्या चैव सालोक्या सान्निध्या च तथा परा ।
सायज्या च चतुर्थी सा व्रतेनानेन या भवेत् ।३।
मुक्तेर्दाता मुनिश्रेष्ठा केवलं शिव उच्यते ।
ब्रह्माद्या न हि ते ज्ञेयाः केवलं च त्रिवर्गदाः ।४।

ब्रह्माद्यास्त्रिगुणाधीशाः शिवस्त्रिगुणतः परः ।
निर्विकारी परब्रह्म तुर्यः प्रकृतितः परः ।।५
ज्ञानरूपोऽव्ययः साक्षी ज्ञानगम्योऽद्वयः स्वयम् ।
कैवल्यमुक्तिदः सोऽत्र त्रिवर्गस्य प्रदोऽपि हि ।६।
कैवल्याख्या पञ्चमी च दुर्लभा सर्वथा नृणाम् ।
तल्लक्षणं प्रवक्ष्यामि श्रूयतामृषिसत्तमाः ।७।

ऋषियों ने कहा–आपने जो मुक्ति का होना बतलाया है,उसमें क्या हुआ करता है और मुक्तिपाने पर क्या दशा होजातीहै-यह सब कृपाकर हमको बताइये ।१। सूतजीने कहा-मोक्ष चार तरहकी होती है । वह मोक्ष साँसारिक क्लेश,पीड़ाकी हर्त्ता होती है और पूर्णआनन्दप्रिय है । मैं उसका स्वरूप आपको बतलारहा हूँ ।२। चारों प्रकार की मुक्तियोंके नाम—सारूप्य, सालोक्य सान्निध्य और सायुज्य हैं जोकि शिवके क्रमसे प्राप्तहुआ करती हैं ।३।हे मुनिश्रेष्ठो! ब्रह्मा और विष्णुआदि वेदधर्म-अर्थ और काम इन तीन पदार्थोंके वर्गको ही दे सकते है मुक्ति को नहीं । मोक्ष परम पुरुषार्थको देने वाले तो केवल एकमहेश्वरही हैं ।४। ब्रह्मादिकदेव तो तीनोंगुणोंके स्वामी हैं और भगवान् तीनोंगुणोंसे परे हैं तथा जो निर्विकारी परब्रह्महैं वे चतुर्थ हैं जो प्रकृतिसे भी परे हैं ।५। वे ज्ञान स्वरूपी महान्देव अविनाशी, साक्षी ज्ञानसे जानने योग्य, अद्वैत,कैवल्य मुक्तिके दाता और धर्मादि त्रिवर्गके भी देनेवाले हैं ।६। हे ऋषिश्रेष्ठो ! यह पाँचवीं "कैवल्य" नाम वाली मुक्ति होती है जो सभीप्रकार के मनुष्योंको दुर्लभ हुआकरती है । अब हम उसके पूरे लक्षण बताते हैं उन्हें आप लोग श्रवण करें ।।१४।।

उत्पद्यते यतः सर्वं येनैतत्पाल्यते जगत् ।
यस्मिंश्च लीयते तद्धि येन सर्वमिदं ततम् ।८।
तदेव शिवरूपं हि पठ्यते च मुनीश्वराः ।
सकलं निष्कलं चेति द्विविधं वेदवर्णितम् ।।९
विष्णुना तच्च न ज्ञातं ब्रह्मणा न च तत्तथा ।
कुमाराद्यैश्च न ज्ञातं न ज्ञातं नारदेन वै ।।१०

शुकेन व्यासपुत्रेण व्यासेन च मुनीश्वरैः ।
तत्पूर्वैश्चाखिलैर्देवैर्वेदैः शास्त्रैस्तथा न हि ।।११
सत्यं ज्ञानमनन्तं च सच्चिदानन्दसंज्ञितम् ।
निर्गुणो निरुपाधिश्चाव्ययः शुद्धो निरञ्जनः ।।
न रक्तो नैव पीतश्च न श्वेतो नील एव च ।
न ह्रस्वो न च दीर्घश्च न स्थूलः सूक्ष्म एव च ।।१३
यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह ।
तदेव परमं प्रोक्तं ब्रह्मैव शिवसंज्ञकम् ।।

जिससे यह सब जगत् उत्पन्न होता है और जिसके द्वारा उस समस्त जगत् का पालन-पोषण होता है तथा जिसमहान् मेंजाकर इसजगत्कालय होता है एव जिसशक्तिने इस सबका पूर्णविस्तारकिया है, हे मुनिगण ! वे शिवरूप कहे जाते हैं। वेदने उनको कलाओंसेपूर्ण तथा कलाओंसेरहित दो प्रकारका वर्णनकिया है। ८-९। वह ऐसा विलक्षणस्वरूप है जिसकाज्ञान ब्रह्मा विष्णु कुमार चतुष्टय और देवर्षि नारदजीको भी नहीं है।१०। यही नहीं किन्तु उसे व्यासपुत्र शुकदेवमुनि, अन्यमहामुनिश्वर,समस्तदेवगण और वेद-शास्त्र आदि किसीनेभी नहीं जानपाया है।११। यहसत्य,ज्ञान, अनन्त, सत्-चित् आनन्दस्वरूप है तथा बिना उपाधिवाला,निर्गुण,अव्यय,शुद्ध और निरञ्जन है।१२। वह परमात्म तत्व रक्त,श्वेत,पीत और नीलनहीं हैं और ह्रस्व,दीर्घ,स्थूल और सूक्ष्मभी नहीं होता है।१३। जहाँ मनके सहित वाणी की पहुँच नहीं होती वही शिवसंज्ञावाला परब्रह्म कहा जाता है।१४।

आकाशं व्यापकं यद्वत्तथैव व्यापकं त्विदम् ।
मायातीतं परात्मानं द्वन्द्वातीतं विमत्सरम् ।।१५
तत्प्राप्तिश्च भवेदत्र शिवज्ञानोदयाद् ध्रुवम् ।
भजनाद्वा शिवस्यैव सूक्ष्ममत्या सतां द्विजाः ।।१६
ज्ञानं तु दुष्करं लोके भजनं सुकरं मतम् ।
तस्माच्छिवं च भजत मुक्त्यर्थमपि सत्तमाः ।।१७
शिवो हि भजनाधीनो ज्ञानात्मा मोक्षदः परः ।

भक्त्यैव ब्रह्वः सिद्धां मुक्ति प्राय ुः परां मुदा ॥१८
ज्ञानमाता शम्भुभक्तिर्मु क्तिप्रदा सदा ।
सुलभा यत्प्रसादाद्धि सत्प्रे मांकुरलक्षणा ॥१९
सा भक्तिर्विविधा ज्ञे या सग ुणा द्विजाः ।
वैधी स्वाभाविकी या या वरा सा सा स्मृता परा ॥२०
नैष्ठिक्यनैष्ठिकी भेदाद् द्विविधैव हि कीर्तिता ।
षड् विधा नैष्टिकी ज्ञे या द्वितीयै कविधा स्मृता ।२१

यह परमब्रह्म आकाशकी भाँति सर्वव्यापक है और मायासे परे द्वन्द्व-रहित और मत्सरता से हीन यह परम आत्मतत्व होता है ।१५। हे द्विज-गण ! इस संसार में भगवान् शिवके ज्ञान का उदय हो जाने पर अथवा भक्ति-भावसे शिवकाभजन करनेसे या सत्पुरुषों जैसी सूक्ष्म मतिसे उनकी प्राप्ति हुआ करती है ।१३। हे मुनिश्रेष्ठो ! इस संसारमें ज्ञानका प्राप्त कर लेना अतिकठिन है और भजनोपासना करना सुगम बताया गया है। इस-लिये मुक्तिपानेके लिए शिवका भजन ही करनाचाहिए ।१७। भगवान्शिव भजनके अधीन रहा करते हैं। वे ज्ञानकी आत्मा तथा मोक्षके दाता पर पुरुष हैं। अनेक सिद्ध भक्ति के द्वारा ही सानन्द परम मोक्ष की प्राप्ति कर लिया करते हैं ।१८। महेश्वरकी भक्तिको ज्ञान उत्पन्न करने वाली जननी और नित्य मुक्ति एवं भोगदात्री कहा जाता है। जिस परम प्रसाद से वह सुलभ हुआ करती है वह सत्य प्रेमके अहङ्कारवाले लक्षणयुक्त बताई गई है ।१९। हे द्विजगण ! वह भक्ति निर्गुण तथा सगुण आदिके भेद से बहुत प्रकार की होती है। इनमें जो वैधी और स्वाभाविक हो वही श्रेष्ठ और अधिक समझनी चाहिए ।२०। फिरभी वह नैष्ठिकी और अनैष्ठिकीके भेदसे दो तरहकी होतो है। इनमें अनैष्ठिकी तो एकही प्रकारकी होती है किन्तु नैष्ठिकी भक्ति छैः प्रकारकी होती है ।२१।

विहिताविहिताभेदात्तामनेकां विदुर्बुधाः ।
तयोर्बहुविधत्वाच्च विस्तारो न हि वर्ण्यते ॥२२
ते नवांगे उभे ज्ञेये श्रवणादिकभेदतः ।

सुदुष्करे तत्प्रसादं विना च सुकरे ततः ।२३
भक्तिज्ञाने न भिन्ने हि शम्भुना वर्णिते द्विजाः ।
तस्माद् भेदो न कर्त्तव्यस्तत्कर्तुः सर्वदा सुखम् ।२४
विज्ञानं न भवत्येव द्विजा भक्तिविरोधिनः ।
शम्भुभक्तिकरस्यैव भवेज्ज्ञानोदयो द्रुतम् ।२५
तस्माद् भक्तिर्महेशस्य साधनीया मुनीश्वराः ।
तथैव निखिलं सिद्धं भविष्यवि न संशयः ।२६
इति पृष्टं भवद्भिर्यत्तदेव कथितं मया ।
तच्छ्रुत्वा सर्वपातेभ्यो मुच्यते नात्र संशयः ।२७

इसमें भी शास्त्रों के ज्ञाता विद्वान् लोग विहिता और अविहिता इन भेदों वाली उसे अनेक तरहकी बतलाते हैं इन दोनोंके भेद-प्रभेद करने से बहुतसे प्रकारकी हो जाती हैं, जिसके विस्तार का वर्णन नहीं किया जा सकता है ।२२। ये दोनों प्रकारकी भक्ति श्रवण, कीर्तम अर्चनादि के भेदों से नौ नौ अङ्गोंवाली होती हैं। ये सब शिवकी प्रसन्नताकेबिना प्राप्तकरना अत्यन्त कठिन है। केवल शिवके प्रसादसे ही इनका पाना सुगम होता है ।२३। हे द्विजो ! शिवने वर्णनकरके बतलाया हैकि भक्ति औरज्ञान आपस में भिन्न नहीं होते हैं। अतएव भक्ति तथा ज्ञान वालों को नित्य सुख की प्राप्ति होती है। इन दोनोंमें भेदका मानना उचित नहीं हैं ।२४। हे विप्र-गण ! जोभक्तिका विरोध करने वाला होता है,उसे विशेषज्ञान कभी नहीं होता है। शिवकीभक्तिसे ज्ञानकाउदय शीघ्रही होजाता है ।२५। हे मुनी-श्वरो ! इस कारण से भगवान् महेश्वर की भक्ति सबको अवश्य ही करनी चाहिए। उसीके करनेसे सभीकुछ सिद्धहोता है। इसमें कुछभी सन्देहनहीं है ।२६। आपने जोकुछभी मुझसे पूछा है,वहसभी मैंने वर्णनकरके आपको सुना दिया है। इसके श्रवणकरनेसे मनुष्योंके समस्तपापोका क्षयहोता है, यह सुनिश्चित बात है ।२७।

शिवका सगुण निर्गुण स्वरूप

शिवः को वा हरिः वो वा रुद्रः को वा विधिश्चकः ।
एतेषु निर्गुणः को वा ह्येतं नश्छिन्धि संशयम् ।।१

यच्चादौ हि समुत्पन्नं निर्गुणात्परमात्मनः ।
तदेव शिवसंज्ञं हि वेदवेदांतिनो विदुः ॥२
तस्मात्प्रकृतिरुत्पन्ना पुरुषेण समन्विता ।
ताभ्यां तपः कृतं तत्र मूलस्थे च जले सुधाः ॥३
पञ्चक्रोशीति विख्याता काशी सर्वातिवल्लभा ।
व्याप्तं च सकलं ह्येतत्तज्जलं विश्वतो गतम् ॥४
संभाव्य मायया यक्तस्तत्र सुप्तो हरि सः वै ।
नारायणेति विख्यातः प्रकृतिर्नारायणी मता ॥५
तन्नाभिकमले यो व जातः स च पितामहः ।
तेनेव तपसा दृष्टः स वै विष्णुरुद्र हृतः ॥६
उभयोर्वामिशमने यद्रुपदर्शित बुधाः ।
महादेवेति विख्यातं निर्गुणं शिवेत हि ॥७

ऋषियोंने कहा—शिव कौन हैं, विष्णु कौन हैं और रुद्र कौन हैं तथा ब्रह्मा कौन हैं? इनसबमें निर्गुण कौन हैं। हमारेमनमें इनके विषयमें बहुत बड़ा सन्देहरहता है,सो आप कृपाकरके यहसब बतलाकर संशयको दूरकरें ।१। सूतजी ने कहा-इस विश्वकी सृष्टिके आरम्भ जो निर्गुण निर्विकार परमात्मासे उत्पन्न हुए हैं उन्हेंही वेद वेदान्तके ज्ञाताओंने 'शिव' इस नाम वाला बतलाया है ।२। हे ज्ञानियो ! उन्हीं शिवसे पुरुषकेसहित प्रकृतिका उदभव हुआ है । फिर वहाँ पर उन दोनों ने मूल में स्थित होकर जल में तपस्याकी है ।३। वही 'पञ्चकोसी' इस नामसे विख्यात् होने वाली काशी है जो सबको अत्यन्तप्रिय है । उसका जल सम्पूर्ण संसारमें व्याप्त होगया है ।४। यह जानकर विष्णु अपनी मायाकर य उसी जलमें शयनकर गये और वे हरि'नारायण'के नामसे प्रसिद्ध हुए और प्रकृति 'नारायणी' नामसे विख्यात हुई ।५। उनकी नाभिमें उत्पन्न कमलसे उद्भूत होने वालेका नाम ब्रह्मा पड़ाऔर उन ब्रह्माजीने अपनी तपस्यामें जिनके दर्शन कियेवे विष्णु हैं ।६। हे पण्डितो ! निर्गुण स्वरूपवाले शिवने ब्रह्मा और विष्णु के मध्यमें उठे हुए पारस्परिक विवाद को शान्त करनेके लिए जिस स्वरूप का प्रदर्शन कराया वही महादेव नामसे विख्यात हुए हैं ।७।

तेन प्रोक्तमहं शम्भुर्भविष्यामि कपालतः ।
रुद्रो नाम स विख्यातो लोकानुग्रहकारकः ।८
ध्यानार्थं चैव सर्वेषामरूपवानभूत् ।
स एव च शिवः साक्षाद् भक्तवात्सल्यकारकः ।९
शिवे त्रिगुणसम्भिन्ने रुद्रे तु गुणधामनि ।
वस्तुतो न हि भेदोऽस्ति स्वर्णे तन्भूषणे यथा ।१०
समानरूपकर्माणौ समभक्तगतिप्रदौ ।
समानाखिलससेव्यौ नानालीलाविहारिणौ ।११
सर्वथा शिवरूपो हि रुद्रो रौद्रपराक्रमः ।
उत्पन्नो भक्तकार्यार्थी हरिब्रह्मसहायकृत ।१२
अन्ये च ये समुत्पन्ना यथानुक्रमतो लयम् ।
यांति नैव तथा रुद्रः शिवे रुद्रो विलीयते ।१३
ते वै रुद्रं मिलित्वा तु प्रयान्ति प्रकृता इमे ।
इमान रुद्रो मिलित्वा तु न याति श्रुतिशासनम् ।१४

उन्होंने कहा था मैं शम्भु विधाताके मस्तकसे प्रकटहोऊंगा उससमय लोकोंपर कृपादृष्टि रखनेवाले वे ही शंभु 'रुद्र'-इस नामसे प्रसिद्ध हुए ।८। अपने भक्तोंपर अनुग्रह करने वाले साक्षात् शिव स्वयं रूपसे रहित होतेहुए भी सबके ध्यानमें आनेके लिये रूपवान् हुए ।९०। माया के तीनों गुणों से रहितहोकर स्थितशिवमें तथा सगुण रुद्रमें वस्तुतः कुछभी भेदनहीं है जिस प्रकार स्वर्णमें और स्वर्ण से निर्मित भूषणमें कुछभी अन्तर नहीं होता है ।१०। ये दोनोंही समान स्वरूप और समानकर्मवाले अपनेभक्तोंको समान रूपसे ही गति देने वाले हैं और सबके द्वारा तुल्य भावसे ही सेवन करनेके योग्य हैं तथा ये दोनों अनेकप्रकारकी लीलायें करनेवाले हैं ।११। अत्यन्त पराक्रम वाले रुद्र सबतरहसे शिवकेही स्वरूप हैं । ये ब्रह्मा और विष्णुकी सहायताकरनेवाले अपने भक्तोंकेलिये उनकाकार्य पूराकरनेकोही अवतीर्ण हुए हैं ।१२। संसार में जोभी उत्पन्न हुए हैं वे सभी क्रमके अनुसार लय को प्राप्त होते हैं । उस तरह रुद्रका लय कभी नहीं होता वे केवल शिवके स्वरूप ही लय होते हैं ।१३। वे सब सामान्य हुए रुद्रमेंमिलकर लय होते

हैं, परन्तु वह रुद्र विष्णु आदिमें मिलकर कभी लयकोप्राप्त नहीं होते हैं। इस विषयमें शास्त्र यही आज्ञा देता है।१४।

सर्वे रुद्रं भजन्त्येव रुद्रः कंचिद् भजेन्न हि।
स्वात्मना भक्तवात्सल्याद् भजत्येव कदाचन।१५
अन्यं भजन्ति ये नित्यं तस्मिंस्ते लीनतां गताः।
तेनैव रुद्रं प्राप्ताः कालेन महता बुधाः।१६
रुद्रभक्तास्तु ये केचितत्क्षणं शिवतां गताः।
अन्यापेक्षा न वै तेषां श्रुतिरेषा सनातनी।१७
अज्ञानं विविधं ह्येतद्विज्ञानं विविधं न हि।
तत्प्रकारमह वक्ष्ये श्रृणुतादरतो द्विजा।१८
ब्रह्मादितृणपर्यन्त यत्किंचिद् दृश्यते त्विह
तत्सर्वं शिव एवास्ति मिथ्या नानात्वकल्पना।१९
सृष्टेः पूर्वं शिवः प्रोक्तः सृष्टेर्मध्ये शिवस्तथा।
सृष्टेरन्तो शिवः प्रोक्तः सर्वशून्ये सदाशिवः।२०।
तस्माच्चतुर्गुणः प्रोक्तः शिव एव मुनीश्वरा।
स एव सगुणो ज्ञेयः शक्तिमत्वाद् द्विधापि सः।२१।

ये सब रुद्रको भजते हैं परन्तु रुद्र किसीको भी नहीं भजते हैं। कभी-कभी अपने भक्तजनपर दया करनेके कारणसे अपने आपकोही भजा करते हैं।१५। हे विद्वद्गण! जोसर्वदा अन्यदेवोंका भजनकियाकरते हैं वे अन्त में उसीसे लयभी होते हैं और इसतरह बहुतसमयके पश्चात् रुद्रकी प्राप्ति कर पाते हैं।१६। किन्तु जो रुद्रकोही भक्ति भावसे भजते हैं, वे उसी समय शिवकेभावको प्राप्तकरलिया करते हैं। उन रुद्रदेवकी किसीभी अन्यदेवता की आवश्यकता नहीं हुआ करती है—यह सनातनी अर्थात् सदा चले आने वालीश्रुति है।१७। हे द्विजगण! संसारमेंअज्ञान तो बहुत तरह का होता है,किन्तु विज्ञान अनेक प्रकारका कभीनहीं होता। अबउसी के भेद तुम्हारे सामने वर्णन करता हूँ। आप उसे श्रवण करो।१८। इस लोक में ब्रह्मासे लेकर तिनकेतक जोकुछभी दिखलाई देता है वहसब शिवकाही स्वरूप है।

इसमें विविधभाँतिकी कल्पनाकरना मिथ्या एवं व्यर्थही है ।१९। सृष्टिकेपूर्व शिव हैं तथा इस संसारको रचनाके मध्यकालमें भी शिव हैं और सृष्टि के अन्तमेंभी शिवही रहते हैं । जब सर्वशून्य होता है तबभी सदाशिव विद्यमान रहते हैं ।२० हे मुनीश्वरो ! इसरीतिसे भगवान्शिव चारगुणों वाले हैं । वे दोप्रकारके स्वरूपमें स्थित होते हुए भी सबप्रकारकी शक्तिसे पूर्णता रखनेके कारण सगुणही हैं–ऐसा ही समझना चाहिए ।२१।

येनैव विष्णवे दत्ताः सर्वे वेदाः सनातनाः ।
वर्णा माता ह्यनेकाश्च ध्यान स्वस्य च पूजनम् । २२
ईशानः सर्वविद्यानां श्रुतिरेषा सनातनी ।
वेदकर्त्ता वेदपतिस्तस्माच्छम्भुरुदाहृतः ।।२३
स एवं शङ्करः साक्षात्सर्वानुग्रहकारकः ।
कर्त्ता भर्त्ता च हर्त्ता च साक्षी निर्गुण एव सः ।।२२
अन्येषां कालमानं च कालस्य कलनाः न हि ।
महाकालः स्वयं साक्षान्महाकालीसमाश्रितः ।।२५
तथा च ब्राह्मणा रुद्रं तथा काली प्रचुक्षते ।
सर्वं ताभ्यां ततः प्राप्तमिच्छया सत्यलीलया ।।२६
न तस्योत्पादकः कश्चिद् भर्त्ता न तस्य हि ।
स्वयं सर्वस्य हेतुस्ते कार्यभूतच्युतादयः ।।२७
स्वयं च कारण कार्यं स्वस्य नैव कदाचन ।
एकोऽप्यनेकतां यतोऽप्यनेकोप्येकतां व्रजेत् ।।२८

जिनने भगवान् विष्णुको समस्त सनातन वेदोंका उपदेश, अनेक वर्ण वाला तथा मात्राओंसे युक्त अपना ध्यान एवं अर्चन बताया है, इससे शिव समस्त विद्याओंके स्वामी,वेदोंकेनिर्माता और वेदोंके अधीश्वर कहे हैं ।२२-२३। वे साक्षात् शिवही सबपर दयाकरने वाले, सबके उत्पादक, पालनकर्त्ता और विनाश करनेवाले साक्षी एवं निर्गुण हैं ।२४। इस सृष्टिमें सबकेसमय का प्रमाणहोता है, किन्तु यहकाल ऐसा है जिसकीकोई कलनाही नहींहोती है । वह स्वयं महाकालीके सेवित साक्षात् महाकाल हैं ।२५। ब्राह्मण लोग

रुद्र तथा महाकालीकोही ऐसा कहाकरते हैं। उन्होंने (दोनोंने) अपनी सत्य लीलाके सहित इच्छासे सभीकुछ प्राप्तकिया है।२६। इनका कोई भी अन्य उत्पादक, पालक और विनाशकरनेवाला नहींहोता है किन्तु वे स्वयंही सबके कारण हैं और विष्णुआदि अन्य समस्तदेवता कार्यभूत हैं।२७।भगवान्शिव तो स्वयं कारण और कार्यस्वरूप हैं। इनका अन्यकोईभी कारण नहींहोता है। वे एक होते हुएभी अनेकस्वरू धारणकरलेते हैं तथा अनेक होकरभी फिर एकही स्वरूपमें स्थित होजाते हैं ॥२८॥

एकं बीजं बहिर्भूत्वा पु बीजं च जायते ।
लहुत्वे च स्वयं सर्वं शिवरूपी महेश्वरः ।२९
एतत्परं शिवज्ञानं तत्वतस्तदुदाहृतम् ।
जानाति ज्ञानवानेव नान्यः कश्चिदृषीश्वराः ॥३०
ज्ञानं सलक्षण ब्रूहि यज्ज्ञात्वा शिवतां ब्रजेत् ।
कथं शिवश्च तत्सर्वं सर्वा शिव एव च ॥३१
एतदाकर्ण्य वचनं सूतः पौराणिकोत्तमः ।
स्मृत्वा शिवपदाम्भाजं मुनीस्तानब्रवीद्वचः ॥३२

एक बीज फलसे बाहिर होकर फिर वह बीज होता है। इसी तरह बहुत होनेपर भी सभीकुछ वस्तु रूपसे स्वयं शिवके रूप वाले महेश्वर ही हैं।२९। हे ऋषीश्व वृन्द ! यह शिवका ज्ञान अत्यन्त श्रेष्ठ है। इसे मैंने तुम्हारेसामने यथार्थरूपसे बतादिया है। इस भगवान्शिवके ज्ञानको ज्ञानी हीसमझता या जानता है अन्यकोई साधारणव्यक्ति इसेनहीं जानसकता है।३०। मुनियोंने कहा—इस शिव ज्ञानके ठीक लक्षण और स्वरूपको भली-भाँति बताइये जिसको प्राप्तकर शिवका स्वरूप प्राप्त होता है।अब आप खुलासाकरके समझाइयेकि किसतरह वे शिव सभीकुछ हैं और किसप्रकार से संसार की सभी वस्तुयें शिव स्वरूप हैं ? ।३१। व्यासजी ने कहा—यह सुनकर पौराणिक विद्वानोंमें श्रेष्ठ सूतजी भगवान्शिवके चरण कमलों का स्मरणकरके उन मुनियोंसे कहने लगे।३२।

ज्ञाननिरूपण और शिव-विज्ञान

श्रूयतामृषयः सर्वे शिवज्ञानं तथा श्रुतम् ।
कथयामि महागुह्यं परमुक्तिस्वरूपकम् ।१
श्री नारदकुमाराणां व्यासस्य कपिलस्य च ।
एतेषां च समाजे तैर्निश्चित्य समुदाहृतम् ।२
इति ज्ञानं सदा ज्ञेयं सर्वं शिवमयं जगत् ।
शिवः सर्वमयो ज्ञेयः सर्वज्ञेन विपाश्चता ।३
आब्रह्मतृणपर्यन्तं यत्किंचिद् दृश्यते जगद् ।
सत्सर्वं शिव एवास्ति स देवः शिव उच्यते ।४
यदेच्छा तस्य जायेत तदा च क्रियते त्विदम् ।
सर्वं स एवं जानाति तं न जानाति कश्चन ।५
रचयित्वा स्वयं तच्च प्रतिश्य दूरतः स्थितः ।
न तत्र च प्रविष्टोऽसौ निर्लिप्तश्चित्स्वारूपवान् ।६
यथा च ज्योतिषश्चैव जलादौ प्रतिबिंबता ।
वास्तुतो न प्रवेशो वै तथैव च शिवः स्वयम् ।७

सूतजी ने कहा-हे ऋषिवृन्द ! शिव का ज्ञान अत्यन्त गोपनीय और मोक्षपद स्वरूपवाला है । मैंने इसे जितनाभी सुना एवं समझा वह तुम्हारे सामने वर्णन करता हूँ, आप सब सावधान होकर सुनो ।१। शौनक,स्वामि कार्तिके, नारद, वेदव्यासजी और कपिलदेव, इन सबके समक्षमें उन्होंने शास्त्रोंसे निश्चय करके कहा है ।२। यह समस्त चराचर जगत् शिवमयही है ऐसा ज्ञान सदा रखना चाहिए जो सर्वज्ञाता विद्वान् है उसे शिवको भी सर्व जगन्मय ही जानना चाहिए ।३। परब्रह्मके स्वरूपसे लेकर तृणपर्यन्त जो कुछभी इस संसारका स्वरूप दिखाईदेता है वह समस्त शिवही का एक रूप है अर्थात् शिवही हैं । इस तरह वे शिव कहलाते हैं ।४। जबभी कभी उनके हृदयमें रचनाकरनेकी इच्छा उत्पन्न होतीहै तभी इस समस्त विश्व का निर्माण कर दिया करते हैं । वे स्वयं सबको खूब अच्छी तरह जानते हैं किन्तु उनको कोईभी नहीं जानपाता है ।५। इस सम्पूर्ण जगत्की रचना

करके स्वयं इसमें प्रविष्टहोते हुयेभी सबसेपृथक् स्थितरहाकरते हैं। वे इसमें प्रविष्ट नहीं होते हैं और न कभी उनका लयही होता है वेतो केवल ज्ञानके स्वरूप वाले हैं ।६। जिस तरह जलमें अग्नि प्रभृति के तेजकी परछाईका भान ऐसाही होता हैकि यह उसके अन्दर विद्यमान है किन्तु वास्तवमेंजल में उसका प्रबेश सर्वथा नहीं होता है,उसीतरह इसजगत्में साक्षात् शिवका भान मात्र ही होता है और वे इसमें लिप्त नहीं होते हैं ।७।

वस्तुतस्तु स्वयं सर्वः क्रमो हि भासते शुभः ।
अज्ञानं च मतेर्भेदो नास्त्यन्यच्च द्वयं पुनः ।८
दर्शनेषु च सर्वेषु मतिभेदः प्रदर्श्यते ।
पर वेदान्तिनो नित्यमद्वैतं प्रतिचक्षते ।९
स्वस्याप्यशस्य जीवोंशो ह्यविद्यामोहितोऽवशः ।
अन्योऽहमिति जानाति तया मुक्तो भवेच्छिवः ।१०
सर्वं व्याप्य शिवः साक्षाद् व्यापाकः सर्वजन्तुषु ।
चेतना चेतनेशोऽपि सर्वत्र शङ्करः स्वयम् ।११
उपायं यः करोत्यस्य दर्शनार्थी विचक्षणः ।
वेदान्तमार्गमाश्रित्य तद्दर्शनफलं लभेत् ।१२
यथाग्निर्व्यापकश्चैव काष्टे काष्टे च तिष्ठति ।
यो वै मन्थति तत्काष्ठं स वै पश्यत्यसंशयम् ।१३
भक्त्यादिसाधनानीह यः कपोति विचक्षणः ।
स वै पश्यत्यवश्यं हि तं शिवं नात्र संशयः ।१४

अर्थात् रूपसे वह शुभ परब्रह्म वेदाक्रमणकरके सवको भासते हैं।बुद्धि के भ्रमको ही अज्ञान कहाजाता है अन्य कुछ भी नहीं है ।८। समस्त दर्शन शास्त्रोंमें मतिका भेदस्पष्ट दिखलाई दिया करता है क्योंकि प्रत्येक सिद्धान्त भिन्न स्वरूप वाले होते हैं,किन्तु वेदान्ती लोग नित्य परमेश्वरको अद्वैतही कहा करते हैं ।९। अपने ही अंशके स्वरूपमें स्थित् यह जीवात्मा अविद्यासे मोहितहोकर 'मैं और तू'-ऐसा समझता है,परन्तु शिव उसअविद्यासे सर्वथा रहित हैं ।१०। सबमेंव्यापक साक्षात् कगवान्शिव सबकोव्याप्तकरके समस्त

जीवोंमें स्थितरहाकरते हैं और समस्तचराचरके प्रभुशिव साक्षात् कल्याण के करनेवाले होते हैं।११। जो बुद्धिमान् मानव शिवके दर्शनप्राप्त करनेके लिये उपाय करता है वह वेदान्तके मार्गका आश्रय ग्रहण करके ही उनके दर्शन प्राप्त किया करता है।१२। जिस प्रकार प्रत्येक काष्ठ में अग्नि व्याप्त होकरही स्थित रहाकरती है किन्तु जो कोई उस काष्ठका मन्थन करता है वही उसमें अग्यिके दर्शनका फल प्राप्त कर पाता है।१३। इसी प्रकारजो विद्वान्मानव भक्तिआदिके साधनोंसे आगे बढ़ता है वह अवश्यही उनशिव का साक्षात् दर्शन प्राप्त कर लेता है इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है।१४।

शिवः शिवः शिवश्चैव नान्यदस्तीति किंचन।
भ्रान्त्या नानास्वरूपो हि भासते शंकरः सदाः।१५
यथा समुद्रो मृच्चैव सुवर्णमथवा पुनः।
उपाधितो हि नानात्वं लभते शङ्करस्थता।१६
कार्यकारणयोर्भेदो वस्तुतो न प्रवर्तते।
केवलं भ्रान्तिबुद्धयव तदभावे स नश्यति।१७
तदा बीजात्प्ररोहश्च नानात्वं हि प्रकाशयेत्।
अन्ते च बीजमेव स्यात्तत्प्ररोहश्च न नश्यति।१८
ज्ञानी च बीजमेव स्यात्प्ररोहो विकृतिर्मता।
तन्निवृतौ पुनर्ज्ञानी नात्र कार्या विचारणा।१९
सर्व शिवः शिवः सर्वो नास्ति भेदश्च कश्चन।
कथं च विविध पश्यत्येकत्वं च कथं पुनः।२०
तथैक चैव सूर्याख्यं ज्योतिर्नानाधिभं जनैः।
जलादौ च विशेषेण दृश्यते तत्तथैव सः।२१

शिव-भक्तकी भावना ऐसीही होनी चाहिए कि सर्वत्र शिवही हैं शिव के अतिरिक्त संसारमें अन्य कुछभी नहीं हैं,भ्रान्तिवश वहीशिव यहाँ नाना स्वरूप में भासमान होते हैं जिस तरह मिट्टी, सागर और सुवर्ण विभिन्न उपाधियोंके कारण अनेक रूपमें दिखलाई दिया करते हैं वैसेहीशिव उपाधियोंके कारण नाना स्वरूप में रहते हैं।१५-१६। वास्तवमें विचार करके

देखा जावे तो यहाँ कारण और कार्यमें कुछभी भेद नहीं होता हैं । यहभेद जो प्रतीत होता है वह केवल अपनी बुद्धिकी भ्रान्तिके होनेसे ही होता है । जब यह बुद्धिकी भ्रांति स्वरूपअज्ञान न नष्ट होजाता है तो यह अन्तरफिर नहीं दिखाईदेता है और दूर हो जाता है ।१७। कारणस्वरूप बीजसेहीवृक्ष अनेकरूपताका प्राप्तक्रिया करता है किन्तु अन्तमें वहवृक्ष तो नष्ट होजाता है और बीजही शेष रहता है ।१८।यहां ज्ञान सम्पन्न जीवात्मा बीजस्वरूप है और वह समस्त प्रकृति स्वरूपिणी विकृति वृक्षके तुल्य है । फिर भी उसकी निवृत्तिमें ज्ञानीही होता है इसमें कुछ विचार करनेकी आवश्यकता नहीं है ।१९। यह समस्त जगत् शिव है तथा शिवही में सम्पूर्ण जगत् है । इन दोनोंमें वस्तुतः कोई भी भेद नहीं होता है । यह कैसे अनेक स्वरूप में दिखाईदेता है और कैसे फिर एकता दिखलाई दिया करतीहै-इसे समझाते हैं ।२०। जिस प्रकार एक ही सूर्य के स्वरूप जलमें मनुष्यों को अनेक सूर्य दिखाई देते हैं उसी तरहसे वह शिव एक होते हुए भी भ्रान्तिके कारणही अनेक रूप में भासमान हुआ करते हैं ।२१।

सर्वत्र व्यापकश्चैव स्वर्शत्वं न विबध्यते ।
तथैव व्यापको देवो बध्यते न क्वचित्स वै ।२२
साहंकारस्तथा जीवस्तन्मुक्तः शङ्करः स्वयम् ।
जीवस्तुच्छः कर्मभोगी निर्विप्तः शङ्करो महान् ।२३
यथैकं च सुवर्णादि मिलिपं रजतादिना ।
अल्पमूल्यं प्रजायेत तथाजीवोऽप्यहंयुतः ।२४
यथैव हि सुवर्णादि क्षारादेः शोधितं शुभम् ।
पूर्ववन्मूल्यतां याति तथा जीवोऽपि संस्कृतेः ।२५
प्रथमं सद्गुरुं प्राप्य भक्तिभावसमन्वितः ।
शिवबुद्धया करोत्युच्चैःपूजनं स्मरणादिकम् ।२६
तद्बुद्धया देहतो याति सर्वपापादिको मलः ।
तदाऽज्ञानं च नश्येत ज्ञानवाञ्जायते यदा ।२७
तदाहंकारनिर्मुक्तो जीवो निर्मलबुद्धिमान् ।
शङ्करस्य प्रसादेन याति शङ्करतां पुनः ।२८

जिसतरह आकाश व्यापकहोकर भी किसीके स्पर्शकरनेमें नहीं आता है,उसीप्रकारसे वह सर्वव्यापक परमात्माभी कहीं बद्ध नहीं होता है ।२२। यह जीवात्मा अहङ्कारसेयुक्त है और शिव स्वयं उस अहङ्कारसे रहित हैं। जीवएकतुच्छ और कृत शुभाशुभ कर्मोंका भोगनेवाला है किन्तु शङ्करपरम महान् और निरन्तर नितात निर्लिप्त है ।२३। शुद्धजीवभी अहङ्कारसे युक्त होनेकेकारण तुच्छबनजाता है जैसे सुवर्ण मूल्यवान् होतेहुएभी चाँदी आदि के मिल जानेपर स्वल्प मूल्य वाला बनजाता है ।२४। तेजाब और अग्नि एवं क्षार आदिसे शोधित किए जानेपर जिसतरह सुवर्णकी शुद्धि होजाती और पूर्ववत् समुचित मूल्य वाला बनजाता है,उसी भाँति संस्कारोंके द्वारा यह अहकारी जीवात्माभी शुद्धस्वरूप वाला होजाया करता है ।२५। जीव का कर्तव्य है कि सर्वप्रथम किसीसुयोग्य श्रेष्ठगुरुसे ज्ञानकीदीक्षा प्राप्तकरे, फिर परम भक्ति के भाव से शिव बुद्धि से उनका पूजन तथा उच्च स्वरसे उनके नामका स्मरण करना चाहिए ।२६। इस प्रकार की बुद्धिबना लेनेपर इस देहके समस्त पाप एवं मलदूर होजाया करते हैं और साराअज्ञान नष्ट होकर ज्ञानउत्पन्न होता है।२७। जबयह जीवात्मा ज्ञानसम्पन्न होजाता है और अहंकारसे छूटजाता है तो उसकीबुद्धि अत्यन्तनिर्मल होजाती है तथा शिवके प्रसादसे शिवके स्वरूप को प्राप्त कर लिया करता है ।२८।

यथाऽदर्शस्वरूपे च स्वीयं रूपं प्रदृश्यते ।
तथा सर्वत्रगं शम्भुं पश्यतीति सुनिश्चितम् ।२९।
जीवन्मुक्तः स एवासौ देहः शीर्णः शिवे मिलेत् ।
प्रारब्धवशगो देहस्तद्भिन्नो ज्ञानवान् मतः ।३०।
शुभं लब्ध्वा न हृष्येत कुप्येल्लब्ध्वाऽशुभं नहि ।
द्वन्द्वेषु समता यस्य ज्ञानवानुच्यते हि सः ।३१
आत्मयोगेन तत्वानामथवा च विवेकतः ।
यथा शरीरतो यास्याच्छरीरं मुक्तिमिच्छता ।३२
सदाशिवो विलीयेत मुक्तो विरहमेव च ।
ज्ञानमूलं तथाध्यात्म्यं तस्य भक्तिः शिवस्य च ।३३

भक्तेश्च प्रेम संप्रोक्तं प्रेम्णश्च श्रवण तथा ।
श्रयणाच्चापि सत्सङ्गः सत्सङ्गाच्च गुरुर्बुधः ।३४
सम्पन्ने च तथा ज्ञाने मुक्तो भवति निश्चितम् ।
इति चेज्ज्ञानवान्यो वै शम्भुमेव सदा भजेत् ।३५

जिस तरह दर्पणमें अपना स्वरूप दिखाई देता है उसी तरह शिवको सर्वत्र व्यापक जानते हैं, यह निश्चय ही समझ लेना चाहिये ।२९। वह जीवात्मा फिर मुक्तहोकर देहसे रहितहोकर शिवकेही स्वरूपमें जाकरमिल जाया करता है । यह देह प्रारब्धके वशीभूत होनेके कारणही मिलाकरता है किन्तु ज्ञानीका शरीरके रहते हुएभी उससे रहितही मानागया है ।३०। ज्ञानवान् जीव वही है जो अपनी प्रियवस्तुसे परमहर्षित नहीं होता है और किसीभी अप्रियवस्तु या दशामें शोकयाक्रोध नहींकरता है और सुख तथा दुःखमें जो समान ही भावना रखता है ३१। मुक्तिका इच्छुक पुरुष अपने आत्माके योगसे या तत्वोंके विचारसे अपने शरीरसे शरीरका त्यागकिया करता है ।३२। जो सदाशिवमें लीनहोजाता है,वह समस्त व्यथापीड़ाओंसे छुटकारा पाकर ज्ञानके मूल स्वरूप अध्यात्मकी प्राप्ति करता है और फिर उसे शिवकी अनपायिनी भक्ति मिलती है ।३३। भक्ति से प्रेम उत्पन्नहोता है, प्रेमसे श्रवण और श्रवण से सत्सङ्ग का लाभ होता है और सत्सङ्गसे संसारमें विद्वान् उद्धारक गुरुदेव की प्राप्ति हुआकरती है ।३४। गुरुसे जब ज्ञानप्राप्त होता हैं तो निश्चयही मुक्ति हो जाया करती है । जो नित्य निरन्तर शिव की उपासना करता है वह इसी रीति से ज्ञान सम्पन्न हो जाया करता है ।३५।

अन्यायाा च भक्त्या वै युतः शम्भुं भजेत्पुनः ।
अन्ते च मुक्तिमायाति नात्र कार्या विचारणा ।३६
अतोधिको न देवोस्ति मुक्तिप्राप्त्यै च शङ्करात् ।
शरणं प्राप्य यञ्चैव संसाराद्विनिवर्तते ।६७
इति मे विविधं वाक्यमृसीणं च समागतैः ।
निश्चित्य कथितं विप्रा धिता धार्यं प्रयत्नतः ।३८

प्रथमं वष्णवे दत्तं शंभुना लिंगसम्मुखे ।
विष्णुनां ब्रह्मणे दत्तं ब्रह्मणां सनकादिषु ।३९
नारदाय ततः प्रोक्तं तज्ज्ञानं सनकादिभिः ।
व्यासाय नारदेनोक्तं तेन मह्यं कृपालुना ।४०
मया चैव भवद्भयश्च भविद्भर्ल्लोकहेतवे ।
स्थापनीय प्रयत्नेन शिवाप्राप्तिकरं च तत् ।४१
इति वश्च समाख्यातं यन्पृष्टोऽह मुनीश्वराः ।
गोपनीयं प्रयत्नेन किमन्यच्छ्रोतुमिच्छथ ।४२

जो मानव अत्यन्त भक्ति की भावना से शिवका भजन करता है वह निश्चयही अन्तमें मुक्तिके परमपदकी प्राप्तिकिया करता है ।३६। भगवान् शङ्कर से अधिक अन्य कोई भी देवता नहीं जिसकी शरण में जाकर यह जीवात्मा संसार के समस्तबन्धनोंको तोड़कर विमुक्त हो जाता है ।३७। हे ब्राह्मणो ! मैंने ऋषियों के समागम से ही यह ज्ञान प्राप्त होने वाले अनेक वाक्य पूर्ण निश्चय करके तुमसे कहे हैं । सब आपको यत्नपूर्वक अपनी बुद्धिमें धारण करने चाहिए ।३८। सर्वप्रथमभगवान्शिवने अपने ज्योति लिङ्गके समक्षमें भगवान् बिष्णुदेवको यहज्ञान प्रदानकियाथा । इसके अनन्तर विष्णुने ब्रह्माजी को इसका उपदेश दिया और ब्रह्माने सनकादिक ऋषियों को इस ज्ञान का उपदेश दिया था ।३९। सनकादिकने इसी दिव्य ज्ञानका उपदेश नारदजीको दिया था । देवर्षि नारद ने व्यासजीको और वेदव्यास महर्षि ने मुझे यह ज्ञान प्रदान किया है ।४०। अब मैंने आपकी उत्कट जिज्ञासा जानकर इसज्ञानको आपको दिया है । आप सबको संसारके हित के लिए इस ज्ञान को यत्नपूर्वक सुरक्षित रखना चाहिये । यह ज्ञान शिवके चरणों की प्राप्ति करा देने वाला है ।४१। हे मुनीश्वरो ! आपने जिस प्रकारसे मुझसे पूछा वह मैंने भली भाँति सभी आपको बतला दिया है । आप इस ज्ञान को यत्नपूर्वक छिपाकर रखें । अब आप मुझसे क्या श्रवण करना चाहते हैं ? ।४२।

एतच्छ्रुत्वा तु ऋषय आनन्द परमं गताः ।

हर्षगद्गदया वाचा नत्वा तुष्टुवुर्मुहुर्मुहुः ।४३
व्यास नमस्तेऽस्तु धन्यस्त्वं शैवसत्तमः ।
श्रावित नः परं वस्तु शैवं ज्ञानमनुत्तम् ।४४
अस्माकं चेतसो भ्रान्तिर्गता हि कृपया तव ।
सन्तुष्टाः शिवसज्ज्ञानं प्राप्यस्ततो विमुक्तिदम्।४५
नास्तिकाय न वक्तव्यमश्रद्धाय शठाय च ।
अभक्ताय महेशस्य न चाशुश्रूषवे द्विजाः ।४६
इतिहासपुराणानि वेदांछास्त्राणि चासकृत् ।
विचार्योद्धृ तत्सार मह्यं व्यासेन भाषितम् ।४७
एतच्छ्रुत्वा ह्येकवारं भवेपाप हि भस्मसात्।
अभक्तो भक्तिमाप्नोति भक्तस्य भक्तिवर्द्धनम् ।४८
पुनःश्रुते च सद्भक्तिर्मुक्तिः स्याच्च श्रुतेः पुनः ।
तस्मात्पुनः पुनः श्राव्यं भुक्ति मुक्तिफलेप्सुभिः ।४९

व्यासजीने कहा-यह सुनकर उन सब ऋषियों को बहुतही प्रसन्नताहुई और हर्षातिरेकसे गद्गदवाणोसे नमस्कारपूर्वक बारम्बार स्तुति करने लगे ।४३।ऋषियोंने कहा हे व्यासमहर्षिके शिष्य सूतजी ! तुम शिवके उपासकों में परमश्रेष्ठ एवं धन्यहो । आपने बड़ाभारी अनुग्रह करके हम सबको परम तत्वरूपी शिव सम्बन्धी ज्ञानका श्रवण कराया है ।४४। आपके अनुग्रह से हमारे मनकीभ्रान्ति एकदम हटगई और आपके सुखसे मुक्तिदायक शिवका ज्ञानपाकर हम लोग पूर्ण सन्तुष्ट हुए हैं ।४५। सूतजीने कहा-हे द्विजवरो ! इस तत्व तथा इतिहास को आप लोग किसी नास्तिक-शिव-भक्ति रहित श्रद्धाहीन–शठ और जो सुनकर अनुराग नहीं रखता है उससे कभी मत कहना । यह परम गोप्य है ।४६। यह सारा वृतान्त अनेक इतिहास-पुराण– शास्त्र और वेदोंका बार-बार मनन करके उनके सारांश स्वरूप व्यासजी ने मुझसे कहा है ।४७। इसका एक ही बार श्रवण करने से समस्तपाप भस्मीभूत होज ते हैं । यह अभक्तको भक्तिदेत है और जोभक्त हैं उनकी भक्तिको विशेष बढ़ा देता है ।४८। इनके दोबार श्रवण करने से

परम श्रेष्ठ भक्तिकी प्राप्ति होती है और इसके भी आगे सुनने से मोक्ष पद मिल जाता है। अतएव भोग-मोक्ष के इच्छुक जीवों को इसका बार-बार श्रवण करना चाहिए ।४६।

आवृत्तयः पञ्च मार्याः समुद्दिश्य फलं परम् ।
तत्प्राप्नोति न सन्देहो व्यासस्य वचनं त्विदम् ।५०
न दुर्लभ हि तस्यैव येनेद श्रुतमुत्तमम् ।
पञ्चकृत्वास्तदा वृत्या लभ्यते शिवदर्शनन् ।५०
पुरातनाश्च राजानो विप्रा बैश्याश्च सत्तमाः ।
इदं श्रुत्वा पञ्चकृत्वो धिया सिद्धि परां गताः ।५२
प्रोष्यत्यद्यापि यश्चेद मानवो भक्तितत्परः ।
विज्ञानं शिवसंज्ञं वै भुक्ति मुक्ति लभेच्च सः ।५३
इति तद्वचनं श्रुत्वा परमानन्दसागताः ।
समानर्चुश्च ते सूतं नानावस्तुभिरादरात् ।५४
नमस्कारैः स्तवैश्चैव स्वस्तिवाचनपूर्वकम् ।
आशीर्भिर्वर्द्धयामासुः सन्तुष्टाश्छिन्नसंशया ।५५
परस्पर च सन्तुष्टाः सूत ते च सुबुद्धयः ।
शम्भु देव पर मत्वा नमन्ति स्म भजन्ति च ।५६

यदि किसी विशेष फल का उद्देश्य चित्तमें हो तो इसकी पाँच बार आवृत्ति अवश्यहीकरे। व्यासजीने कहा हैकि जो ऐसाकरते हैं उनकेउद्देश्य की सिद्धिके साथही उन्हें मुक्ति भी अवश्य मिलती है, इसमें कुछभी सन्देह नहीं है ।५०। जिस किसी ने भी इसपरमउत्तम इतिहासको श्रवण किया है उसको कोईभी वस्तु दुर्लभ नहीं रहती है। इसका पाँचवार पाठ करने से भगवान्शिवके दर्शनभी प्राप्त होजाते हैं ।५१। प्राचीनकालमें अनेक राजा, ब्राह्मण तथा वैश्यलोग इसकी पाँचआवृत्ति इसी बुद्धिसे करलेने के पश्चात् परम सिद्धियों का लाभ उठा चुके हैं ।५२। इस समय में भी जो मनुष्य भक्ति-भावमें तत्परहोकर इसका श्रवण करेगा वह शिव-विज्ञानको भुक्ति और मुक्तिको प्राप्त कर लेगा ।।५३।। व्यासजी ने कहा सूतजी के ऐसे

वचन सुनकर ऋषियों को अत्यधिक आनन्द हुआ और बड़े आदर के साथ अनेक पूजोपचारोंसे सूतजी का वे अर्चन करने लगे ।५४। परमसन्तुष्ट और सन्देहरहितहोकर स्वस्तिवाचन करतेहुए नमस्कारों तथा आशीर्वादोंसे उन्हे बढ़ाने लगे ।५५। तबसे बुद्धिशाली वे ऋषिगण तथा सूतजी शिवको ही सर्वोपरि शिरोमणिदेव मानकर उन्हें नमस्कार करते हुए पूजने लगे ।५६।

एतच्छिवतसुविज्ञानं शिवस्यातिप्रियं महत् ।
भुक्ति मुक्तिप्रदं दिव्यं शिवभक्तिविवर्द्धनम् ।५७
इय हि संहिता पुण्या कोटिरुद्राह्वया परा ।
चतुर्थी शिवपुराणस्य कथिता मे मुदावहा ।५८
एतां यः श्रृणुयाद् भक्त्या श्रावयेद्वा समाहितः ।
स भुक्त्वेहाखिलान्भोगान्नते परगतिं लभेत् ।५९

यह भगवान् शिवका विज्ञान शिवको अत्यधिक प्रसन्न करने वाला है भुक्ति एव मुक्तिका दायक तथा दिव्य भक्तिको बढ़ाने वाला है ।५७। यह अत्यन्त 'कोटि रुद्र' नाम वाली शिवपुराणकी संहिताका वर्णन मैंने किया जो महान् आनन्द की देने वाली है ।५८। जो मनुष्य सावधान चित्त से भक्तिपूर्वक इसका श्रवण करता है वह नित्य ही समस्त भोगों का उपभोग कया करता हे और अन्त समय में परमगति कोप्राप्त होता है ।५९।

—◈—

उमा--संहिता

सनत्कुमार का महापातक वर्णन

ये पापनिरता जीवा महानरकहेतवः ।
भगवंस्तान्समाचक्ष्व ब्रह्मपुत्र नमोऽस्तु ते ।१
ये पापनिरता जीवा महानरकहेतवः ।
ते समासेन कथ्यन्ते सावधानतया श्रृणु ।२
परस्त्रीद्रव्यसंकल्पश्चेतसाऽनिष्टचिंतनम् ।
अकार्याभिनिवेशश्च चतुर्द्धा कर्म मानसम् ।३
अविबद्धप्रलापत्वमसत्य चाप्रिथं च यत् ।
परोक्षतश्च पैशून्यं चतुर्द्धा कर्म वाचिकम् ।४
अभक्ष्यभक्षण हिंसा मिथ्याकार्यनिवेशनम् ।
परस्वानामुपादनं चतुर्द्धा कर्म कायिकम् ।५
इत्येतद् द्वादशविध कर्मप्रोक्तं त्रिसाधनम् ।
अस्य भेदान्पुनर्वक्ष्ये येषां फलमनंतकम् ।६
ये द्विषन्ति महादेवं संसारार्णवतारकम् ।
सुमहत्पातक तेषां निरयार्णवगामिनाम् ।७

श्रीव्यासजीने कहा-हे भगवन् ! हे ब्राह्मपुत्र ! अब आप कृपाकर उन जीवोंका वर्णनकीजिये जो महापापी हैं और नरक गमनकरनेके अधिकारी होते हैं । हम आपको सादर नमस्कार करते हैं ।१। सनत्कुमारजी ने कहा जो जीवात्मा सर्वदा पापकर्मोंमें परायणहोकर महाघोरनरक के अधिकारी हैं उनका वर्णन मैं अति संक्षेप के साथ करता हूँ । आप सावधान होकर श्रवण करें ।२। मानसिक कर्म भी चार प्रकार का होता है । दूसरों के धन तथा स्त्रीके प्राप्त करनेकी इच्छा करना, अपने चित्तमें दूसरों का बुरा विचारना, काम-वासना विचार तथा अभिनिवश करना-ये चार मनके कर्म

कहे गये हैं ।३। इसी तरह चारही प्रकारका वाचिक कर्म भी होता है—असङ्गत सम्भाषण करना,असत्य तथा अप्रियबातें कहना, पीठपीछे चुगलखोरी करना-ये वाणीके कर्म हैं ।४। ऐसेही चार तरहके शारीरिक कर्म हैं-अभक्ष्यका भक्षण करना,हिंसा करना,झूठे कार्य करना और दूसरों का धन उड़ालेना-ये शरीरके कर्म कहेजाते हैं ।५। यहाँ तक शारीरिक,वाचिक और मानसिक बारहतरहका कर्म बतलाया है । इसकेआगे इनभेदोंके प्रभेद बतलाते हैं जिनकाकि अनन्त फल हुआकरता है ।६। जोमनुष्य इस संसार रूपी महान् अगाधसागरसे तारनेवाले महादेवकी निन्दाकरते हैं उनका यह महापाप नरकके समुन्द्रमें जानेके लायक होता है ।७।

ये शिवज्ञानवक्तारं निन्दन्ति च तपस्विनन् ।
गुरुन्पितृनथोन्मत्तास्ते यांति निरयार्णवम् ।८
शिवनिन्दा गुरोनिन्दा शिवज्ञानस्य दूषणम् ।
देवद्रव्यापहरणं द्विजद्रव्यविनाशम् ।९
हरन्ति ये च समूढ़ाः शिवज्ञानस्य पुस्तकम् ।
महांति पातकान्याहुरनन्तफलदानि षट् ।१०
नाभिनन्दति ये दृष्ट्वा शिवपूजां प्रकल्पिताम् ।
न नभत्यर्चितं दृष्ट्वा शिवलिङ्गं स्तुवति न ।११
स्थानसंस्कापूजां च ये न कुर्वंति पर्वसु ।
विधिवद्वा गुरुणां च कर्मायागव्यवस्थिताः ।१२
यचेष्टचेष्टा निः शङ्काः सतिष्टन्ति रमति च ।
उपवारनिनिमुक्ताः शिव ग्रे गुरुसन्निधौ ।१२
ये त्यजति शिवा व र शिवभक्तान्द्विषन्ति च ।
असंपूज्य शिवज्ञान येऽधीयन्ते लिखन्ति च ।१४

जो महा उन्मत्त पुरुष शिव की गाथा कहने वाले तपस्वी तथा अपने गुरुकी एवं पितरोंकी निन्दाकिया करते हैं वे दुरात्मा जीव भी नरकगामी होते हैं ।८। शिवकी निन्दा--गुरुकी निन्दा,शिव-ज्ञानमें दोष लगाना और ब्राह्मणोंके धनका अपहहण या नाश करना,शिव-ज्ञानीकी पुस्तकका हरण

ये छः अनन्त फल देने पातक बताये गये हैं ।९-१०। जो कल्पित हुई शिव-पूजाको देखकर भी हर्षित नहीं होते है अथवा शिवके पार्थिवलिङ्गको पूजित देखकर भी उन्हें प्रणाम नहींकरते हैं तथा उनका स्तवन नहीं करते हैं ।११। जो सर्वदा अपनीइच्छा के अनुकूलही निस्सन्देह स्थितिरखते हैंतथा रमण कियाकरते हैं और शिवजीके आगे एवं गुरुके निकट उपचारसे भ्रष्ट होते हैं । ।१२। जो पर्वोंमेंस्नान और संस्कार-पूजानहींकरते है तथाकर्मयोग में व्यवस्थितरहकर सविधिअपने गुरुजनकाअर्चन नहीं कियाकरते हैं।१३। जो शिवाचारसेयुक्त शिवके भक्तोंसे द्वेषभावरखते हैं और जो शिव-विज्ञान का बिनापूजनके ही पाठकिया करते हैं या लिखते हैं ।१४।

अन्यायतः प्रयच्छन्ति श्रण्वन्त्युच्चारयन्ति च ।
विक्रीडन्ति च लोभेन कुशाननियमेन च ।१५
असस्कृतप्रदेशेषु यथेष्टं स्वापयन्ति च ।
शिवज्ञानकथाऽक्षेपं यः कृत्वान्यत्प्रभाषते ।१६
न ब्रवीती च यः सत्यं न प्रदानं करोति च ।
अशुचिर्वाऽशुचिस्थाने यः प्रवक्ति श्रृणोति ।१७
गुरुपूजामकृत्वैवः यः शास्त्रं श्रोतुमिच्छति ।
न करोति च शुश्रूषामास्थां च भक्तिभावतः ।१८
नाभिनन्दति तद्वाक्यमुत्तरं च प्रयच्छति ।
गुरुकर्मण्यसाध्यं यत्तदुपेक्षां करोति च ।१९
गरुमार्तमशक्तं च विदेशं प्रस्थितं तथा ।
वैरिभिः परिभूतं वा यः संत्यजति पापकृत ।२०
तद्भार्य्यापुत्रमित्रे यश्चावज्ञां करोति च ।
एवं सुवाचकस्यापि गुरोर्धर्मानुदर्शिनः ।२१

जो अन्यायसे दान करते, सुनते तथा उच्चारण करते हैं एवं लालच के वशीभूत होकर कुत्सित ज्ञानके नियमसे बुरी-बुरी क्रीड़ा करते हैं ।१५। जो लोग अपनीहीइच्छासे असंस्कृत स्थानों में सोते या सुलाते हैं औरशिव की ज्ञान-कथामें विक्षेपकरते या आक्षेपकरके कुछकुतर्क करते हैं ।१३।जो

कभी सत्य नहीं बोलते हैं, कभी कुछ प्रदान नहीं करते हैं और स्वयं पवित्र हो या अपवित्र हो ऐसे स्थानमें कुछ कहते या सुनते हैं ।१७। जो बिना गुरुके पूजन किये ही शास्त्रोंको सुनते हैं या श्रवण करना चाहते हैं और जो अपने गुरुकी सप्रेम भक्तिकेसाथ सेवा नहीं करते हैं याउनकी आज्ञाकापालन नहीं करते हैं ।१८। जो गुरुजनोंके वाक्योंका आदर नहीं करतेहैं या उनको उत्तर देदेते हैं और जो गुरुके कार्यको असाध्य बताकर उसकी लापरवाही किया करते हैं ।१९। जो पापीगुरु,रोगी,असमर्थ तथा परदेशमें स्थित या शत्रुओं द्वारा घिरेहुए या तिरस्कृत मनुष्यको छोड़देते हैं ।२०। जो उनकी स्त्री,पुत्र और मित्रोंका तिरस्कार करते हैं तथा श्रेष्ठवक्ता,धर्म दर्शक गुरुकी भार्या, पुत्र और मित्रकी अवज्ञा किया करते हैं ।२१।

एतानि खलु सर्वाणि कर्माणि मुनिसत्तम ।
सुमहत्पातकान्याहुः शिवनिन्दासमानि च ।२२
ब्रह्मघ्नश्च सुरापश्च स्तेयी च गुरुतल्पगः ।
महापातकिनस्त्वेते तत्संयोगी च पञ्चमः ।२३
क्रोधाल्लोभाद् भयाद् द्वेषाद् ब्राह्मणस्य वधे समः ।
मर्मांतिक महादोषमुक्त्वा स ब्रह्महा भवेत् ।२४
ब्राह्मण यः समाहूय दत्वा यश्चाददाति च ।
निर्दोषं दूषयेद्यस्तु स नरो ब्रह्महा भवेत् ।२५
यश्च विद्याभिमानेन निस्तेजयति सुद्विजम् ।
उदासीनं सभामध्ये ब्रह्महा स प्रकीर्तितः ।२६
मिथ्यागुणैयं आत्मानं नयत्युत्कर्षतां बलात् ।
गुणानापि निरुद्धास्य स च वै ब्रह्महा भवेत् ।२७
गवां बृषाभिभूतानां द्विजानां गुरुपूर्वकम् ।
यः समाचरते विघ्नं तमाहुर्ब्रह्मघातकम् ।२८

हे मुनिश्रेष्ठ ! ये उपर्युक्त समस्तकर्म शिवकी निन्दाके तुल्यही महापाप कहे जाते हैं।१२। ब्राह्मण की हत्या करने वाला मदिराका पान करने वाला, चोरीकरने वाला और अपने गुरुकी पत्नीका गमन करने वाला तथा

पाँचवाँ इनके साथ मेल मोहब्बत रखने वाला ये सब महापापी कहेजाते हैं ।२३। क्रोधसे,भयसे, द्वेषसे जो ब्रह्माण के बधमें मर्मोंको भेदन करने वाले महादोषोंको कहता है वहभी ब्रह्म-हत्यारा माना जाता है ।२४। जोब्राह्मण को बुलाकर दियेहुए दानकोभी फिर वापिस लेलेता है और जो दोषरहित पवित्र व्यक्ति को भी दोषलगाता है वह भी ब्रह्म हत्यारा कहाता है ।२५। जो मनुष्य अपनी पठित विद्या के अभिमान में चूर होकर किसी उदासीन श्रेष्ठ ब्राह्मणको निस्तेज करता है वहभी ब्रह्म-हत्यारेके तुल्य ही महापापी माना जाता है ।२६। जो अपने मिथ्यागणों से बलात् अपने ऐसे गुणों का प्रकटकरके आपही उन्नतिके पदकीप्राप्ति कियाकरता है वहभी ब्रह्म-हत्यारे के समान ही कहा गया है ।२७। बैल आदि से तिरस्कृत हुई गायोंको तथा गुरु के सहित ब्राह्मणों को विघ्न उपस्थित करता है वह भी ब्रह्म-हत्यारा माना गया है ।२८।

देवद्विजगवां भूमिं प्रदत्तां हरते तु यः ।
प्रनष्टामपि कालेन तमाहुर्ब्रह्मघातकम् ।२९
देवद्विजस्वहरणमन्यायेनार्जितं तु यत् ।
ब्रह्महत्यासमं ज्ञेयं पातकं नात्र संशय ।३०
अधीत्य यो द्विजो वेदं ब्रह्मज्ञानं शिवात्मकम्।
यदि त्यजति यो मूढः सुरापानस्य तत्समम् ।३१
यत्किंचिद्धि व्रतं गृह्य नियमं यजनं तथा ।
संत्यागः पञ्चयज्ञानां सुरापानस्य तत्समम् ।३२
पितृमातृपरित्यागः कूटसाक्ष्यं द्विजानृतम् ।
आमिषं शिवभक्तानामभक्ष्यस्य च भक्षणम् ।३३
वने निरपराधानां प्राणिनां चापघातनम् ।
द्विजार्थं प्रक्षिपेत्साधुर्न धर्मार्थं नियोजयेत् ।३४
गवां मार्गे वने ग्रामे यैश्चैवाग्नि प्रदीयते ।
इति पापानि घोराणि ब्रह्महत्यासमानि च ।३५

जो देवता, विप्र और गौओंके लिये कृष्णार्पण की हुई भूमि को काल-

वश नष्ट होनेपर भी हरणकर लेता है उसमनुष्यको भी ब्रह्म-हत्यारा कहा जाता है ।२९। किसीभीदेव तथा ब्राह्मणकेधनका हरणकरना तथा अनीति से धन एकत्रित करना-यहभी कर्म ब्रह्म-हत्याके समानहोते हैं और इनका पाप भी ब्रह्म-हत्यारे के तुल्य ही लगता है इसमें तनिक भी सन्देहनहीं है ।३०।जोमहामूढ़ विप्रवेदोंको पढ़करभी शिवके ब्रह्मज्ञानका त्यागकरदेता है वह मदिरा पानके समान पाप बतलालागया है ।३१। किसी भी नियम या ब्रतको ग्रहणकरके पञ्च-महायज्ञका त्यागककरदेना भी मदिरा-पानकेसमान महापाप माना गया है ।३२। अपने पूज्य माता-पिताका त्याग कर देना, मिथ्या भाषण करना, शिवके सेवक भक्तोंके माँसका सेवन करना और जो भक्षणके अयोग्यवस्तु है उसका भक्षणकरना ।३३। वनमें निरपराधबिचारे पशुओंका वध करता और साधु- ब्राह्णों के लिये तथा धर्मके कार्यके लिये प्राणोंका मोह करना ।३४। गौओंकी राहमें तथा ग्राममें आग लगा देना-ये सभी ब्रह्म-हत्याके तुल्यही महापाप कहे जाते हैं ।३५।

दीनसर्वस्वहरण नरस्त्रीगजवाजिनाम् ।
गोभूरजतवस्त्राणामोषधीनां रसस्य ।३७
चन्दनागरुकर्पूरकस्तूरीपट्टवाससाम् ।
विक्रयस्त्वविपत्तौ यः कृतो ज्ञानाद् द्विजातिभिः ।३८
हस्तन्यासापहरणं रुक्मस्तेयसमं स्मृतम् ।
कन्यानां वरयोग्यानामदानं सदृशे वरे ।३८
पुत्रमित्रकलत्रेषु गमनं भगिनीषु च ।
कुमारीसाहसं घोरं मद्यपस्त्रीनिषेवणम् ।३९
सवर्णायाश्च गमनं गुरुभार्यासमं स्मृतम् ।
महापापापि चोक्तानि श्रृणु त्वमुपपातकम् ।४०

किसी भी दीन-हीन का सर्वस्व हरण कर लेना—पुरुष, स्त्री, हाथी, घोड़ा,गो-भूमि,चाँदी वस्त्र,औषध,रस,चन्दन अगर,कपूर, कस्तूरी और पट्ट वस्त्र आदि के बेचनेका काम करना और द्विजातियोंके द्वारा ही इन कामों का ज्ञानपूर्वक कराना ।३६। हाथ से रखी हुई किसी धरोहरको मार लेना

सुवर्णके चुराने के समान है। जो कन्याएं वरके देने योग्य हैं उन्हें उनके समान वरोंको न देना, पुत्र-मित्रकी स्त्रियोंकेसाथ तथा बहिनोंकेसाथ गमन करना,कुमारीके साथ बलात्कार करना,मदिरा-पान करनेवाली स्त्रीकेसाथ गमन करना,सवर्ण स्त्रीके साथ गमन करना गुरु-पत्नीके गमन के समानही होता है–ये सभी ऊपर बतायेहुए महाघोरपाप कहे गये हैं, इसके आगे मैं अब उपपातकों का वर्णन करता हूँ उनको आप सुनें ॥३७-३८-३९-४०।

विभिन्न पापों का स्वरूप वर्णन

द्विजद्रव्यापहरणमपि दायव्यातिक्रम ।
अतिमानोऽतिकोपश्च दांभिकत्वं कृतघ्नतः ।१
अत्यन्तविषयासक्तिः कार्पण्यं साधुमत्सरम् ।
परदाराभिगमनं साधुकन्यासु दूषणम् ।२
परिवित्तिःपरिवेत्ता च यया च परिविद्यते ।
तयोर्दानं च कन्यायास्तयोरेव च याजनम् ।३
शिवाश्रमतरूणां च पुष्पारामविनाशनम् ।
यः पीडामाश्रमस्थानामचरेदल्पिकामपि ।४
सभृत्यपरिवारस्या पशुधान्यधनस्ध च ।
कुप्यधान्यपशुस्तेयमपां व्यापावनं तथा ।५
यज्ञारामतडागानां दारापत्यास्त विक्रयम् ।
तीर्थयात्रोपवासानां व्रतोपनयकर्मिणाम् ।६
स्त्रीधनान्युपजीवंतिस्त्रीभिरत्यन्तनिर्जिताः ।
अप्क्षण च नारीणां मायया स्त्रीनिषेवणम् ।७

श्रीसनत्कुमारजीने कहा-ये नीचे बताये हुए सभी उपपातक कहे जाते हैं-ब्राह्मणोंके धनकोछीन लेना, किसी भी अन्यके भागको स्वयं पचाकर उसे नहीं देना,अत्यन्त घमण्डकरना,अति पाखण्डकरना और किसी के किए हुए उपकारको न मानना ।१। सांसारिक विषयों में ज्यादा मनकी प्रवृत्ति रखना,कंजूसी करना,सज्जन मनुष्यों के साथ ईर्ष्याका भावरखना,दूसरोंकी स्त्रीके साथ गमन करना तथा श्रेष्ठ कन्याओंमें कोई भी दोष लगाना ।२।

पर-वित्ति परवेत्ता तथा जिसके द्वारा जाना जाता है इन दोनों को कन्या का दानकरना इन दोनोंसे यज्ञकराना ।३। शिवके आश्रममें स्थित वृक्ष बाग या पुष्पोंको नष्ट करना,आश्रममें रहने वाले मनुष्यों को पीड़ा देना-ये सभी उपपातक कहे जाते हैं ।४ सेवक परिवार के सहित पशु,धान्य,धनका दान तथा धान्य पशुओं का चुराना, जलको अपवित्र करना ।५। यज्ञ बाग, सरोवर, स्त्री और अपनी सन्तानको बेचडालना,तीर्थ यात्री तथा तीर्थ-स्थल उपवास, व्रत,उपनयन करने वालोंको विक्रय करदेना भी उपपातक होते हैं ।६। स्त्री के धनसे वृत्ति करना, स्त्रियों के द्वारा जीते हुए होना, स्त्रियों के रक्षण करने कपटसे धनभोग करना ।७।

कलागताप्रदानं च धान्यवृष्ट्युपसेवनम् ।
निन्दिताच्च धनादानं पण्यानां कूटजीवनम् ।८
विषमारण्यपत्राणां सततं वृषवाहनम् ।
उच्चाटनाभिचारं च धन्यादान भिषविक्रया।९
जिह्वाकामोपभोगाथ यस्यारल्भः सुकर्मसु ।
मूलेनाध्यापको नित्यं वेदज्ञानादिकं च यत् ।१०
ब्राह्मयादिव्रतसत्यागश्चान्याचारनिषेवणम् ।
असच्छास्त्रागिनं शुष्कतर्कावलम्बनम् ।११
देवाग्निगुरुसाधूनां निन्दया ब्राह्मणस्य च ।
प्रत्यक्षं वा परोक्षं वा राज्ञां मण्डलिनामानि।१२
उत्सन्नपितृदेवेज्याः स्वकर्मत्यागिनश्च ये ।
दुःशीला नास्तिकाः पापाः सदा वाऽसत्यवादिनः ।१३
पर्वकाले दिवा वाप्सु वियोनौ पशुयोनिषु ।
रजस्वलाया योनौ च मैथुनं यः समाचरेत् ।१४

समय पर आयेहुए को भी कुछ न देना धान्य वृद्धिका सेवन करना,निन्दित धनको लेना और व्यापार में कूट-जीवन बिताना भी उपपातक बताये गये हैं ।८। विषम जङ्गलों के पत्तोंका तोड़ डालना, बैलका वाहन करना किसी के उच्चाटन या मारण का प्रयोग करना, धान्य का छीन लेना तथा वैद्य

वृत्तिका करना-ये सभी उपपातक होते हैं ।९।अपनी जिह्वाके रसभोग की कामनासे बुरे कर्ममें प्रवृत्तहोना और वेदज्ञान आदिमें केवल मूलको पढ़ाना भी उपपातक होता है ।१०। ब्राह्म आदि व्रतका त्याग कर देना, अन्योंके आचारका सेवन बुरे शास्त्रोका अध्ययन और शुष्क तर्कका सहारा लेनाभी उपपातक है ।११। देवता,ब्राह्मण,अग्नि,साधु और चक्रवर्ती राजाकी पीछे मे निन्दा करना,पितृयज्ञ,देवयज्ञका त्याग करना, अपने स्वाभाविक कर्मका त्यागकर देना, दुराचरण करना, नास्तिक भावरखना,पाप-वृत्तिकरना और मिथ्या बोलना-ये सभी उपपातक कहेगये हैं ।१२-१३। पर्वके समममें, दिन के समयमें जलके मध्यमें, वियोनि मे, पशु योनिमें और रजस्वला योनिमें गमन करना उपपातक होते हैं ।१४।

स्त्रीपुत्रमित्रसंप्राप्तौ आशाच्छेदकराश्च ये ।
जनस्याप्रियवक्तारः क्रूराः समयवेदिनः ।१५
भेत्तॉ तडागकूपान संक्रयाणां रसस्य च ।
एकपंक्तिस्थितानां च पाकभेदं करोति यः ।१६
इत्येतैः स्त्रीनराः पापैरुपातकिनः स्मृताः ।
युक्ता एभिस्तथान्येऽपि शृणु तांस्तु ब्रवीमिते।१७
ये गोब्राह्मणकन्यानां स्वामिमित्रतपस्विनाम्।
विनाशयन्ति कर्माणि ते नरा नारकाःस्मृता ।१८
परस्त्रियाऽभितप्यंते ये परद्रव्यसूचकाः ।
परद्रव्यहरा नित्यं तौलमिथ्यानुसारकाः ।१९
द्विजदुःखकरा ये च प्रहारं चोद्धरति ये ।
सेवन्ते तु द्विजाःशूद्रां सुरां बध्नति कामतः ।२०
ये पापनिरताःक्रूरा येऽपि हिंसाप्रिया नरा ।
वृत्यर्थं येऽपि कुर्वन्ति दानयज्ञादिकाःक्रियाः ।२१

जो स्त्री-पुत्र और मित्रों के प्राप्त होने पर आशा को तोड़ देते हैं-तथा मनुष्योंकेसाथ सर्वदा कटुभाषणकरते हैं और क्रूर,समयकाज्ञान नहीं रखते हैं,ये सभीउपपातकी मानेजाते हैं ।१५।तालाब-कूपतथा किसीभी जलाशय

और रसोंका भेदनकरना एव एकही पंक्तिमें बैठेहुए लोगोंके भोजनमें भेद-भावकरना भी उपपातक होते हैं।१६। इन सभी ऊपर बताये हुए कर्मोंके करने से स्त्री हो या पुरुषहो सब उपपातकी कहे जाते हैं। जोभी कोई इन पातकोंसे युक्त हैं तथा अन्यपापोंसे भी युक्तहोते हैं उन सबका वर्णन करते हैं आपलोग श्रवणकरें।१७। जो पुरुष गौ,ब्राह्मण,कन्या,स्वामी,मित्र और तपस्वियों के कार्यों को बिगाड़ डालते हैं वे निश्चयही नरकके गामी हुआ करते हैं।१८। जो अन्योंकी स्त्रियों से दुःखित होते हैं तथा जो पराये धन के सूचक हैं एवं नित्यही दूसरोंके धनका हरण करने वाले हैं और मिथ्या तोल करने वाले होते हैं, वे नरक के अधिकारी हैं ॥१९॥ जो ब्राह्मणोंको सताते हैं और उन पर प्रहार किया करते हैं-जो सिद्ध होकर शूद्र की स्त्री का सेवन किया करते हैं और कामसे मदिराको बाँधते हैं ॥२०॥जो सदा पापमय कर्मों में ही परायण रहा करते हैं—जो अत्यन्त क्रूर हैं—जो सर्वदा हिंसा किया करते हैं और जो अपनी जीविकाके लिए ही दान यज्ञ आदि किया करते हैं।२१।

गोष्ठाग्निजलरथ्यासु तरुच्छायानगेष ।
त्यजन्ति ये पुरीषाद्यानारामायतनेषु च ।२२
लज्जाश्रमप्रसादेषु मद्यपानरताश्च ये ।
कृतकेलिभुजगाश्च रन्ध्रान्वेषणतत्पर: ।२३
वशेष्टकालिकाकाष्ठैः शृंगैःशंकुभिरेव च।
ये मार्गमनुरुंधति परसीमां हरन्ति ये ।२४
कूटशासनकर्त्तारः कूटकर्मक्रियारतः ।
कूटपाकान्नवस्त्राणां कूटसंव्यवहारिणः ।२५
धनुषः शस्त्रशल्यानां कर्त्ता यःक्रयविक्रयी।
निर्दयोऽतीव भृत्येषु पशूनां दमनश्च यः।२६
मिथ्या प्रवदतो वाचआकर्णयति य शनै।
स्वामिमित्रगुरुद्रोही मायावी चपलः शठ।२७
ये यार्य्यापुत्रमित्राणिबालवृद्धकृशातुरान्।
भृत्यानतिथिबधूंश्च त्यक्त्वाश्ननति बुभुक्षितान् ।२८

जो गोशाला, अग्निकुण्ड, जलाशय, गलीकी राह, वृक्षोंकीछाया,पर्वत शिखर और निवासस्थान में लल-मूत्र करते हैं या फेंकते ।-२। जो लज्जा के आश्रम तथा महलोंमें मद्यपान किया करते हैं । दूसरोंकेछिद्रों की खोज करने में तत्पर सर्पोंकेसमान क्रीड़ा करते हैं-वे सभी नरकगामी होते हैं । ।१२। जो पुरुष बांस,ईंट,पत्थर,काष्ठ,सींग और कालों से मार्ग को रोकदेते हैं तथा दूसरोंकी सीमाका हरण करलेते हैं ये सभी नरकके अधिकारी होते हैं ।२४। जो कटपसे शिक्षा देने वाले, छल भद कर्म एवं व्यापारमें तत्पर रहा करते हैं और कपटपूर्ण पाक, अन्न तथा वस्त्रोंका व्यवहार करनेवाले होते हैं-वे सब नरकगामी है ।२५। जो पुरुष धनुष, शस्त्र और शल्यों के निर्माण करने वाले हैं तथा इनकी खरीद फरोख्त किया करते हैं—अपने भृत्यों (नौकरों)केसाथ निर्दयताका व्यवहार कियाकरते हैं और जो पशुओं को बुरी तरहसे मारते हैं-ये सब नरककेगमन करनेवाले होते हैं ।२६। जो मनुष्य झूँठी बातको धीरे-धीरे सुनाता है-अपने मित्र, स्वामी और गुरुसे द्रोहकरने वाले हैं कपट व्यवहारकरने वाले,ठग और चपल हैं-ये सब नरक के अधिकारीहोते हैं ।२७। जो मनुष्य अपनी स्त्री-पुत्र,मित्र, बान्धव, वृद्ध दुर्बल,रोगी,भृत्य,अतिथि और बान्धवोंको न खिलातेहुए,भूखा ही छोड़ कर भोजनकर लिया करते हैं-ये सभी नरकके जाने वाले उतपातकी होते हैं ।२६।

यः स्वयमिष्टमश्नाति विप्रेभ्यो न प्रयच्छति ।
वृथापकः स विज्ञेयो ब्रह्मवादिषु गर्हितः ।२९
नियमान्स्वयमादाय ये त्यजन्त्यजितेन्द्रियाः ।
प्रव्रज्यावासिता ये सरस्यास्य प्रभेदकाः ।३०
ये ताडयन्ति यां क्रूरा दमयते मुहुर्मुहुः ।
दुर्बलान्ये न पुष्णन्ति सततं यं त्यजन्ति च ।३१
पीडयंत्ययिभारेणासहतं वाहयंति च ।
योजयन्नकृताहारान्न विमुचंचि संयतान् ।३२
ये भारक्षतरोगार्तान्गोवृषाँश्च क्षुधातुरान् ।
न पालयन्ति यन्नेन गोघ्नास्तेनारकाःस्मृता ।३३

वृषाणां वृषणास्ये च पापिष्ठा गालयन्ति च ।
वाहयंति च गां बन्ध्यां महानारकिणोनराः ।३४
आशया समनुप्राप्तान्क्षुतृष्णाश्रमकार्शितान् ।
अतीथींश्च तथा नाथान्स्वतन्त्रान्गृहमागतान्।४५
अन्नाभिलाषान्दीनान्वा बालवृद्धकृशातुरान्।
नानुकपति ये सूढ़ास्ते यांति नरकार्णवम् ।३६

जो स्वयं नियमोंको स्वीकारकरके इन्द्रियोंको जीतनेवाला नर है और स्वीकृतनियमोंका त्यागकरदेते है और संन्यासग्रहणकरके घरमें रहते हैं तथा शिव प्रतिमाका भेदन करते हैं ये सब नरकगामी होते हैं ।२९-३०। जो अत्यन्य क्रूरतासे गायोंको मारते है तथा बारम्बार दमनकिया करते है,जो दुर्बलोंका पोषण नहीं कियाकरते हैं तथा उनको सर्वदा त्यागदेते हैं-वे नरकगामीहोते हैं ।३१। जो अत्यन्तबोझालादकर पीड़ादेते हैं,न सहनकरने वाले पशुकीभी बराबर जोततेरहाकरते हैं और जिनपशुओंको खाना न मिलाहो ऐसे भूखे पशुओंको भी जोतते या बधाहुआ रखते है वे मनुष्य नरक यातना भोगनेके अधिकारी हुआ करते हैं ।३२। जो अत्यन्त असह्य भार से पीड़ित एवं घायल, रोगी और क्षुदा पीड़ित गाय, बैलोंका समुचित रूपसे पालन पोषण नहीं कियाकरते हैं-वे निस्सन्देह गौ हत्यारे,महापापी नरक के दुःख भोगनेवाले होते हैं ।३३। जो पापात्मा विचारेबैलोंके अण्डकोशोंको पिटवा कर उन्हें बधिया बनाया करते हैं तथा बाँझ गौओंको भी जोताकरते हैं-वे पुरुष महान्‌नरककी यातनाभोगते हैं ।३४। कुछ आशालेकर प्राप्तहोनेवाले, भूख-प्यास और परिश्रमके कारण विकल, अभ्यागत तथा अनाथोंको, अन्न पानेकीइच्छासे समागतोंका दीन,बालक वृद्ध,दुर्बल और रोगियों पर जो दया नहीं करते हैं, वे महान् मूर्ख अवश्य ही घोरनरकमें जाते हैं ।३५-३६।

गृहेष्वर्था निवर्तन्ते श्मशानादपि बांधवाः ।
सुकृत दुष्कृत चैव गच्छन्तमनुगच्छति ।३७
आजीविको माहिषिकः सामुद्रो वृषलीपतिः ।
शूद्रवत्क्षत्रवृत्तिश्च नारकी स्याद् द्विजाधमः ।३८

यश्चोचितमतिक्रम्य स्वेच्छयैवाहरेत्करम् ॥३९॥
नरके पच्यते सोऽपि योपि दण्डरुचिर्नरः ॥४०॥
उत्कोचकै रुचिक्रीतैस्तस्करैश्च प्रपीड्यते ।
यस्य राज्ञः प्रजा राष्ट्रे पच्यते नरकेषु सः ॥४१॥
ये द्विजा परिगृह्णान्ति नृपस्यान्यायवर्तिनः ।

मनुष्य मृत्युगत होजानेपर साराधन एश्वर्य घरमेंही पड़ाछोड़जाता है, उसे श्मशानमें पहुँचाकर भाई-बन्धुभी सब घर लौट आते हैं । केवल वही एक जीवात्मा अकेला किये हुए पाप तथा पुण्यों को साथ लेकर परलोक में जाया करता है । वहाँ अपने कर्मोंका भोग भोगना पड़ता है । अतः सदा सत्कर्म ही करना चाहिये, यही इसका तात्पर्यार्थ है ।३७। बकरी, भैंसका क्रय-विक्रय करनेवाला नीच ब्राह्मण, समुद्र पर रहनेवाला, शूद्रा स्त्री का पति, शूद्रकेतुल्य और क्षत्रियको वृत्ति करनेवाला महानीच होकर नरकगामी होता है ।३८। जो शास्त्रोक्त उचित करना उल्लंघन करके अपनी ही इच्छा से कर वसूल या हरण करता है और जो सर्वदा दण्ड देनेकी रुचि रखता है वह अवश्यही नरकको भोगता है ।३९-४०। जिस राजाके राज्य में प्रजाजन घूँसखोर और अपनी इच्छाके ही अनुसार क्रय विक्रय करने वाले हों तथा प्रजाके लोग तस्कारोंसे उत्पीड़ित रहते हों, वह राजाभी नरकगामी होता हैं ।४१। जो ब्राह्मण अन्यायी राजा का दियाहुआ दान लेते हैं, वे भी घोर नरकमें निश्चयही जायाकरते हैं ।४२।

ते प्रयांति तु घोरेषु नरकेषु न संशयः ॥४२॥
अन्यायात्समुपादाय द्विजेभ्यो यः प्रयच्छति ।
प्रजाभ्यः पच्यते सोऽपि नरकेषु नृपो यथा ॥४३॥
पारदारिकचौराणाँ चण्डानाँ विद्यते त्वघम् ।
पारदारितस्यापि राज्ञो भवति नित्यशः ॥४४॥
अचौरं चौरवत्पश्येच्चौरं वाऽचौररूपिणाम् ।
अविचार्य्यं नृपस्तमाद्घातयन्नरकं ब्रजेत् ॥४५॥
घृततैलान्नपापानि मधुमांससुरासवम् ।
गुडेक्षुशाकदुग्धानि दधिमूलफलानि च ॥४६॥

तृणं काष्ठं पत्रपुष्पमौषधं चात्मभोजनम् ।
उपानच्छत्रशकटमासनं च कमंडलुम् ॥४७॥
ताम्रसीसत्रपुः शस्त्रं शङ्खाद्यं च जलोद्भवम् ।
वैद्यं च वैणवं चान्यद् गृहोपरकरणानि च ॥४८॥
और्णं कार्पास कौमेय पट्ट सूतोद्भवानि च ।
स्थूलसूक्ष्माणि वस्त्राणि ये लोभाद्धि हरन्ति च ॥४९॥

जो राजा प्रजाको दबाकर अन्यायपूर्वक धनलेकर ब्राह्मणोंको दानरूप में देता है वह राजा अपनी अनीतिसे युक्त पापसे कारण नरकगामी होता है ।३४। पराई स्त्रियों के साथ भोग तथा चोरी करने वाले पुरुषोंको तथा नित्य ही पर-स्त्रीमें रत राजाको बड़ा पाप लगता है और उसके लिए वह नरक की यातना भोगते हैं ।४४। जो राजा चोरी न करने वाले चोर और चोरीकाकाम करनेवाले तस्करपुरुषोंको सत्पुरुष समझता है और बिना-भली भाँति विचारकियेही ताड़ना एवं दण्डदेता है, वह नरकगामो होता है ।४५। जो निम्न वस्तुओंके चोरहोते हैं वे नरकगामी होते हैं यथा-घी, तेल, पीनेकी वस्तु-अन्न, शराब, माँस, अर्क, ईख, गुड़, शाक, दूध, दही, फल, मूल, घास, काष्ठपत्र, फूल, औषध, अपना भोजन जूता, छाता, गाड़ी, कमण्डल, आसन, लोहा, ताम्र, सीसा, रांग, शस्त्र, शङ्ख, जलसे उत्पन्न वस्तु-वैद्य लकड़ी, घरके काममें आने वाली वस्तु-ऊनी, सूती, रेशमी, रामवास आदि एवं छालके निर्मित मोटे व बारीक वस्त्रोंको जो भी कोई लालच वश चुरा लेते हैं-वे निश्चय ही नरककी यातना भोगते हैं ।४६-४७-४८-४९।

एवमादीनि चान्यानि द्रव्याणि विविधानि च ।
नरकेषु ध्रुवं यान्ति चापहृत्याल्पकानि च ॥५०॥
यद्वा तद्वा परद्रव्यमपि सर्षपमात्रकम् ।
अपहृत्य नरा यान्ति नरकं नात्र संशयः ॥५१॥
एवमाद्यैर्नरः पापैरुत्क्रांतसमनन्तरम् ।
शरीर यातनार्थाय सर्वाकारमवाप्नुयात् ॥५२॥
यमलोक ब्रजन्त्येते शरीरेण यमाज्ञया ।
यमदूतैर्महाघोरैर्नीयमानाः सुदुःखिता ॥५३॥

देयतिर्यङ्‌मनुष्याणामधर्मनिरतात्मनाम् ।
धर्मराजः स्मृतः शास्ता सुघोरैर्विविधैर्वधैः ॥५४॥
नियमाचारयुक्तानां प्रमादात्स्खलितात्मनाम् ।
प्रायश्चित्तैर्गुरुः शास्ता न बुधैरिष्यते यमः ॥५५॥
परदारिकचौराणामन्यायव्यवहारिणाम् ।
नृपतिः शासकः प्रोक्तः प्रच्छन्नानां स धर्मराट् ॥५६॥
भस्मात्कृतस्य पापस्य प्रायश्चित्तं समाचरेत् ।
नाभुक्तस्य न्यथा नाशः कल्पकोटिशतैरपि ॥५७॥
य करोति स्वयं कर्म कारयेच्चानुमोदयेत् ।
कायेन मनसा वाचा तस्य पापगतिः फलम् ॥५८॥

इसके अतिरिक्त भी अनेक प्रकार के बहुत से द्रव्य हैं, जिनका हरण करनेसे चाहे स्वल्प मात्रामेंही क्यों न हो, निश्चयही नरकगामीहोते हैं।५० कुछभी क्यों न हो, पराई वस्तु तो चाहे सरसोंके दानेके बराबर भी चुराई जावेतो इसका बुरा परिणाम नरकयातना अवश्यही सहनापड़ता है, इसमें तनिकभी संशय नहीं है।५१। मनुष्य उपर्युक्त चोरी करनेके पापोंसे नरक भोगनेके पीछे शारीरिक कष्टउठानेके लिए समस्त आकारकी प्राप्तिकरता है।५२। ऐसे पापकर्म करने वाले पापी शरीरको लेकर मेरे आदेशसे भीषणवपु वाले यमदूतों के द्वारा पकड़े हुए अत्यन्त दुःखसे भरकर यमराज के लोकको जाते हैं।५३। धर्मराज अनेक प्रकारके वधोंके द्वारा देव-मनुष्य और पक्षी सबको जो अधर्म करते हैं, दण्ड दिया करता है।५४। जो नियम और सदाचारों में तत्पर रहा करते हैं, कभी अज्ञानवश गिरजाते हैं तो ऐसे लोगों को अनेक प्रकार के प्रायश्चितों द्वारा गुरु ही शिक्षा दे दिया करते हैं। ऐसे लोगों को शिक्षा पाने के लिए धर्मराजके पास नहीं जाना पड़ता है। ऐसा पण्डित लोग कहते हैं।५५। पराई स्त्रियों से प्रसङ्ग करने वाले—चोर और अन्याय से व्यवहार करने वालों को दण्ड देकर शिक्षा देने वाला राजा बताया गया है। जो गुप्त महापाप किया करते हैं, उनको यमराज ही दण्ड देते हैं।५६। इसलिये किये हुए पापों से शुद्धि प्राप्त करने को प्रायश्चित अवश्य ही करना चाहिए

अन्यथा पापोंका फल बिना भोगेहुए करोड़ों कल्पों में भी नष्ट नहीं होता है ।५७। पापकर्म स्वयं करे या मन वाणी या शरीरके द्वारा पापकर्म करावे अथवा इनका अनुमोदन करे-उसको उनका फल अवश्य ही भोगना पड़ता है ।५८।

नरकलोकका मार्ग और यमदूतोंका स्वरूप वर्णन

अथ पापैर्नरा यांति यमलोकं चतुर्विधः ।
संत्रासजननं घोरं विवशाः सर्वदेहिनः ।। १ ।।
गर्भस्थैर्जायमानैश्च बालैस्तरुणमध्यमैः ।
स्त्रीपुन्नपुंसकैर्जीवैर्ज्ञातव्यं सर्वजन्तुषु ।। २ ।।
शुभाशुभफल चात्र देहिनाँ संविचार्यते ।
चित्रगुप्तादिभिः सर्वैर्वसिष्ठप्रमुखैस्तथा ।। ३ ।।
न केचित्प्राणिनः सन्ति ये न यान्ति यमक्षयम् ।
अवश्यं हि कृतं कर्म भोक्तव्यं तद्विचार्य्यताम् ।। ४ ।।
तत्र ये शुभ कर्माणः सौम्यचित्ता दयान्विताः ।
ते नरा यान्ति सौम्येन पूर्वं यमनिकेतनम् ।। ५ ।।
पे पुनः पापकर्माणः पापा दानविवर्जिताः ।
ते घोरेण पथा यान्ति दक्षिणेन यमलायम् ।। ६ ।।
षडशीतिसहस्त्राणि योजनानामतीत्य तत् ।
वैवस्वतपुर ज्ञय नानारूपमवस्थितम् ।। ७ ।।

श्री सनत्कुमारजी ने कहा- समस्तप्राणी चार तरहके पापोंमें त्रासपैदा करनेवाले अत्यन्त भयङ्कर यमराजके लोकको जाया करते हैं और मजबूर होकर उन्हें वहाँ अवश्य हीं जाना पड़ता है ।१। गर्भमें स्थित रहकर जन्म धारण करने वाले बालक युवा, प्रौढ़ और वृद्ध तथा स्त्री एवं पुरुष और अपुंसक सभीको यह बात भलीभाँति जान व समझलेनी चाहिए ।२। वहाँ पर लेखा-जोखा रखनेवाले धर्मराजके मंत्री चंद्रगुप्तआदि तथा महर्षि वशिष्ठ आदि मुनियों द्वारा समस्त जीवोंके शुभाशुभ कर्मका विचार कियाजाता है ।३। अपना किया हुआ कर्म सभीको अवश्यही भोगनापड़ता है । इसलिये

ऐसे कोई भी प्राणी नहीं है जो यमराज के लोकको नहीं जाते हैं। शुभ-अशुभ कर्मोंका निर्णय वहाँ परही होता है।४। इन प्राणियों में जो शुभ कर्म करने वाले और सौम्य चित्तवाले कृपापूर्ण मनुष्य होते हैं वे वहाँ यमलोक में सौम्य मार्ग से पूर्वद्वार को जाया करते हैं।५। जो अनेक पापकर्म करने वाले महपापी एवं दानशून्य प्राणी होते हैं, वे घोर दक्षिण दिशाके मार्गसे यमराज के लोकको जाया करते हैं।६। वह वैवस्वतपुर अनेक रूप में स्थित हैं और वहाँ जानेके लिए छियासीहजार योजन कोसों का फासला तय करके जाना पड़ता है।७।

समोपस्थमिवाभाति नराणां पुण्यकर्मणाम् ।
पापिनामतिदूरस्थं यथा रौद्रेण गच्छताम् ॥ ८ ॥
तीक्ष्णंकटकयुक्तेन शर्कराविचितेन च ।
क्षुरधारानिभैस्तीक्ष्णैः पाषाणै रचितेन च ॥ ९ ॥
क्वचित्पंकेन महता उरुतोकैश्च पातकैः ।
लोहसूचीनिभैर्दर्भैः सम्पन्नेन पथा क्वचित् ॥१०॥
तटप्रायातिविषयैः पर्वतवृक्षसंकुलैः ।
प्रतप्तांगारयुक्तेन यांति मार्गेण दुःखिता ॥११॥
क्वचिद्विषमगर्तैश्च क्वचिल्लोष्ठैः सुदुष्करैः ।
सुतप्तबालुकाभिश्च तथा तीक्ष्णैश्च शङ्कुभिः ॥१२॥
अनेकशाखावितत्तैर्व्याप्तं वंशवनैः क्वचित् ।
कष्टेन तमसा मार्गे नानालम्बेन कुत्रचित् ॥१३॥
अयः शृंगाटकैस्तीक्ष्णैः क्वचिद्दावाग्निना पुनः ।
क्वचित्तप्तशिलाभिश्च क्वचिद्व्याप्तं हिमेन च ॥१४॥

यही यमलोक पुण्यात्माओंको तो अत्यन्त समीपमें स्थित जैसा प्रतीत होता है और पापियोंको अत्यन्तही दूरमें स्थितजैसा लगता है। पापीप्राणी बड़ेभयङ्कर मार्गसे होकर इस लम्बी यात्राको पार करतेहुए वहाँ पहुँचपाते हैं।७। मार्गमें कहीं भयानक काँटे बिछेहुए हैं तो कहीं बालू रेतही रेत भरी पड़ी है। किसी जगह छुरेकी तीखीधारके तुल्य चीरदेने वाला पाषाण बिछे

हुए हैं ऐसे मार्गसे जानापड़ता है ।९। वह मार्ग कहींतो बहुतभारी दलदल से युक्त कीचड़वाला होता है-किसीजगह उरुतोक पापोंसेयुक्त तो कहीं लोहे की सुईकेसमान तीखी कुशाओं से युक्त होता है ।१०। उस मार्ग में कहीं-कहीं तटप्राय प्रदेशोंके अत्यन्त कठिक पर्वतहोते हैं और किसीजगह घने वृक्षों का भयानक जंगल होता है । किसी स्थान पर तपेहुए अंगार भरे होते हैं । ऐसे मार्गमें प्राणी बहुतही दुःखित होते हुए जाया करते हैं ।११। यमलोक के मार्गमें किसीजगह बहुत भारी गहरे गर्त आते हैं,कहीं ऊँचे टीलेहोते हैं और कहींपर खूब तपीहुई बालू होती है तथा तीखे कीले गड़े होते हैं ।१२। यमपुरका रास्ता बहुतही कठिन होता है, कहीं भयानक शाखायुक्त बाँसोंका जंगलहोता है और किसीजगह घोर अन्धकार छाया रहता है तथा उसमार्ग में ऐसे बहुतसे आधार रहाकरते है ।१३। वह रास्ता कहीं लोहेके सिंघाड़ों से व्याप्त रहता है जो बहुतही तीखेहोते हैं । किसी जगह दावानलसे व्याप्त रहता है, किसी स्थानपर तपीहुई पाषाण शिलाएँ मिलती हैं, तो कहीं बहुत ठण्डी बर्फ जमी हुई रहती है ।१४।

क्वचिद्वालुकया व्याप्तामाकण्ठांतः प्रवेशया ।
क्वचिद् दुष्टाम्बुना व्याप्तं क्वचिच्च करिषाग्निना ॥१५॥
क्वचित्सिंहैर्वृकैर्व्याघ्रैर्मशकैश्च सुदारुणैः ।
क्वचिन्महाजलौकाभिः क्वचिच्चाजगरैस्तथा ॥१६॥
मक्षिकाभिश्च रौद्राभिः क्वचित्सर्पैर्विषोल्वणैः ।
मत्तमातंगयूथैश्च बलोन्मत्तैः प्रमाथिभिः ॥१७॥
पंथानमुल्लिखद्भिश्च सूकरैस्तीक्ष्णदंष्ट्रिभिः ।
तीक्ष्णशृंगैश्च माहिषैः सर्वभूतैश्च श्वापदैः ॥१८॥
डाकिनीभिश्च रौद्राभिर्विकरालैश्च राक्षसैः ।
व्याधिभिश्च महाघोरैः पीडयमाना व्रजंति हि ॥१९॥
महाधूलिविमिश्रेण महाचण्डेन वायुना ।
महापाषाणवर्षेण हन्यमानानिराश्रया ॥२०॥
क्वचिद्विद्युत्प्रपातेन दह्यमाना व्रजन्ति ।
महता बाणवर्षेण विध्यमानाश्च सर्वतः ॥२१॥

उस यमपुरके मार्ग में कहीं कण्ठ पर्यन्त गड़ जाने वाली तप्तबालू हैं तो किसी जगह दूषित गन्दाजल भरारहता है। किसी स्थानपर करीषकी अग्नि व्याप्त रहा करती है।१५। मार्गमें किसी स्थान पर सिंह-बाघ और और भेड़ियाआदि हिंसक एवं भयानक जीव होते हैं। कहीं पर अजगर भरेहुए हैं तो कहीं भयानक मच्छर तथा जौंक मिला करती हैं।१६। यमपुरका मार्ग विषैली मक्खी, सर्प और मतवाले बलोन्मत्त हाथियों से पूर्ण रहता है जोकि बीच-बीचमें जहाँ-तहाँ मिलाकरते हैं और भयदेते हैं।१७। यह रास्ता सब ओर भयावह जीवोंसे भरा-पूरारहता है। कहीं तीक्ष्णदाढ़ों से जमीन खोदने वाले जंगलीशूकर हैं तो कही पैनेसींगों वाले भैंसे रहाकरते हैं। सभी प्रकार के हिंसक जानवर वहाँ मिला करते हैं।१८। मार्गमें बहुतविकट डाँकिनी, विकरालराक्षस दिखाईदेते हैं। इस-तरह उस मार्गमें अत्यन्तघोर व्याधियोंसे पीड़ितहोकर जायाकरते हैं।१९ इस यमपुरके मार्गकी प्राणी भयानक धूल से व्याप्त होकर प्रचण्ड वायुके झोंकों से झकझोरते हुए होकर और बृहत् पाषाण वृष्टिसे निराश्रय एवं परम क्लेशित होकर बड़ी कठिनाईसे तय किया करते हैं।२०। किसी जगह बिजलीके सन्ताप से झुलसते हुए और किसी जगह चारों ओर से होने वाली बाणों की वर्षा से पीड़ित होते हुए इस यमपुर के मार्ग को पूरा करते हैं।२१।

पतद्भिर्वज्रपातैश्च उल्कापातैश्च दारुणैः।
प्रदीप्तांगारवर्षेण दह्यमानाश्च संति हि ॥२२॥
महता पाँसुवर्षेण पूर्य्यमाणा रुदंति च।
महामेघरवंघोरैस्त्रस्यते च मुहूर्मुहुः ॥२३॥
निशितायुधवर्षेण भिद्यमानाश्च सर्वतः।
महाक्षाराम्बुधाराभिः सिच्यमाना वृजंति च ॥१४॥
महाशीतेन मगुता रूक्षेण परुषेण च।
समताद् बाध्यमानाश्च शुष्यते संकुचन्ति च ॥२५॥
इत्थ मार्गेण रौद्रेण पाथेयरहितेन च।
निरालम्बेन दुर्गेण निर्जलेन समंततः ॥२६॥

विषमेणैव महता निर्ज्जनापाश्रयेण च ।
तमोरूपेण कष्टेन सर्वदुष्टाश्रयेण च ॥२७॥
नीयते देहिनः सर्वे ये मूढ़ाः पापकर्म्मिणः ।
यमदूतैर्महाघोरैस्तदाज्ञाकारिभिर्बलात् ॥२८॥

कहींपर प्राणियोंपर वज्रपात होता है,कहीं अत्यन्त दारुण उल्काग्नि का पातहोता है और किसी जगह अङ्गारोंकी एकदम वर्षा होती है जिससे शरीरमें भस्मीभूत होनेका कष्ट होता है ।२२। प्राणी मार्गमें धूलसे व्याप्त होकर रुदनकरते हैं और भयानक मेघोंसे भयभीत होते हैं ।२३। पापत्मा प्राणी यमपुरके मार्गमें चारों ओरसे तीखे शस्त्रोंकी वृष्टिसे भेदित होते हुए और महाखारी समुद्रकी लहरोंसे सिंचित होकर जाया करते हैं ।२४। मार्ग में बहुत रूखी व कठोर वायु लगती है, जिससे शुष्क और सुकड़े हुए हो जाते हैं ।२५। इसरीतिसे वह मार्ग बहुतही अधिक भयङ्कर होता है जिसमें न कुछ चबेना है और न कोई आधार ही । उसमें पीनेके लिये जल भी प्राप्त नहीं होता है ।२६। बड़े ही विषम, निर्जन आश्रयहीन, अन्धकार पूर्ण तथा दुरात्माओं से घिरा हुआ यमपुरीका मार्ग है, जिससे पापीजीव जाया करते हैं ।२७। जो मूर्ख पापात्मा प्राणी होते हैं उन्हें यमराज के आज्ञाकारी महाघोर दूतों के द्वारा बलात्कार से लेजाया जाता है ।२८।

एकाकिनः पराधीना मित्रबन्धुविवर्जिताः ।
शोचन्तः स्वानि कर्माणि रुदंतश्च मुहुर्मुहुः ॥२९॥
प्रेता भूत्वा विवस्त्राश्च शुष्ककण्ठोष्ठतलुकाः ।
असौम्या भयभीताश्च दह्यमानाः क्षुधान्विताः ॥३०॥
बद्धाः श्रृङ्खलया केचिदुत्तनपादका नराः ।
कृष्यते कृष्यमाणाश्च यमदूतैर्बलोत्कटैः ॥३१॥
उरसाऽधोमुखाश्चान्ये धृष्यमाणाः सुदुःखिताः ।
केशपाशनिबन्धेन संकृष्यन्ते च रज्जुना ॥३२॥
ललाटे चाँकुशेनान्ये भिन्ना दुष्यंति देहिनः ।
उत्तानाः कटकपथा ववांचदगारवर्त्मना ॥३३॥

पश्चाद्वाहुनिबद्धाश्च जठरेण प्रपीडिता: ।
पूरिता शृङ्खलाभिश्च हस्तयोश्च सुकीलिता: ॥३४॥
ग्रीवापाशेन कृष्यन्ते प्रयांत्यन्ये सुदु:खिता: ।
जिह्वाँकुशप्रवेशेन रज्ज्वाऽऽकृष्यन्त एव ते ॥३५॥
नासाभेदेन रज्ज्वा च व्याकृष्यन्ते तथापरे ।
भिन्ना कपोलयो रज्ज्वा कृष्यतेऽन्ये तथौष्टयो: ॥३६॥

पापी जीव यमदूतों के द्वारा पकड़े हुए अकेले-पराधीन-विवश-मित्र तथा बन्धु-बान्धवों से विमुक्त होकर अपने कुकर्मों पर चिन्ता करते हुए और बारम्बार रोते हुए मार्गमें जायाकरते है ।२६। पापोप्राणी जब प्रेत होते हैं तो वस्त्ररहित उनका गला होता है, ओठ और तालू सूखे हुए हैं, सोम्यता से रहित भयभीत-परम सन्तप्त और भूखसे परम क्लेशित होकर यमपुरी की यात्रा करते हैं ।३०। उन पापियों में कुछ साँकलोंसे बंधेहुए हैं तो कुछ ऊपरका पैर कियेहुए हैं । उन्हें बलवान् यमदूत जबर्दस्तीसे खींचकर लेजाते हैं ।३१। पापी जीवों में कुछ उत्तान होकर मस्तकपर अंकुश से विदीर्ण होते हुए परम दु:खित है तो कोई हृदय से नीचे मुख कियेहुए घिसटे चले जाते हैं, कुछ काल की पाशों से बंधी हुई रस्सीसे खिंचे हुए ले जाये जाते हैं । कोई अत्यन्त क्लेशित हैं जोकि कण्टकाकीर्ण तथा अङ्गारपूर्ण मार्ग से ले जाये जाते हैं ।३२-३३। कुछ पापियोंको यमदूतोंके द्वारा मार्ग में भुजाओं के बाँधकर लेजाया जाता है । कोई शृङ्खलाओंसे खूब कसकर बंधेहुए उदर से पीड़ित होकर जाते हैं कुछके हाथों में कीलें ठुकी हुई रहा करती हैं ।३४। कोई कोई पापात्मा गर्दन के फाँसेसे खींचे जाते हैं । कोई जिह्वाँकुश प्रवेश वाली रस्सीसे खींचेहुए परमदु:खित होकर यमपुरीके मार्गमें जाते हैं । कुछ लोग नासिकाके भेदन वाली रस्सीके द्वारा तथा कुछ कपोल और होठोंको भेदन वाली रस्सी के द्वारा मार्गमें यमके दूतोंसे खींचेहुए होकर जाया करते हैं ।३५-३६।

छिन्नाग्रपादहस्ताश्च छिन्नकर्णोष्टनासिका: ।
संछिन्नशिश्नवृषणा: छिन्नभिन्नांगसंधय। ॥३७॥

आभिद्यमाना: कुंतैश्च भिद्यमानाश्च सायकैः ।
इतश्चेतश्च धावत: क्रन्दमाना निराश्रयाः ॥३८॥
मुद्गरै लौंहदण्डैश्च हन्यमाना मुहूर्मुहुः ।
कंटकर्विविधर्घोरैर्ज्वलनार्कसमप्रभैः ॥३९॥
भिन्दिपालैर्विभिद्यंते स्रवंत: पूयशोणितम् ।
शकृतांकृमिदिग्धाश्च नीयते विवशा नराः ॥४०॥
याचमानाश्च स लिलमन्नं वापि बुभुक्षिताः ।
छायां प्रार्थयमानाश्च शीतार्ताश्चानल पुनः ॥४१॥
दानहीनाः प्रयांत्येवं प्राथयंतः सुखं नराः ।
गृहीतदानपाथेयाः सुखं यांति यमालयम् ॥४२॥

उन पापात्माओंमें कुछ आगेके हाथ-पैरोंसे छिन्न होते हैं-कोई कान-ओठ और नाकसेछिन्न तथा कुछ अण्डकोष एवं लिंगसेछिन्न और कुछ अंगों के जोड़ोंसे छिन्न-भिन्नहोकर लेजाये जाते हैं ।३७। यमदूतोंके द्वारा अत्यन्त त्रासको प्राप्त पापात्मा यमपुरीके मार्ग में अलकोंसे विद्यमान होकर बाणोंसे विदीर्ण-निराश्रय और इधर-उधर को रोकर दौड़ते भागते हुए लेजाये जाते हैं ।३८। कुछपर मुग्दर से तथा लोहेके डन्डोंसे बारम्बार प्रहार किये जाते हैं और वे घोरपरम सन्तप्तसूर्यके समान काँटोंसे पीड़ित होते हैं ।३९। वहाँ मार्गमें कुछपापी भिन्दिपाल अस्त्रोंसे भेदित किये जाते हैं । विष्ठाके कीड़ों से, जिनसे रुधिर और मवाद टपकता रहता है, कुछ पापात्मा नोचे जाते हैं जिनके कष्टसे विवश होते हुए यमपुरीका जाया करते हैं ।४०। यमपुरके मार्गमें उन पापियोंको खानेका अन्न तथा पीनेका जल नहीं मिलता है इसलिये वे अत्यन्त व्याकुल होकर अन्नकी और जल की याचना करतेहुए तथा शीताधिक्य से बेचैन अग्नि तापको माँगते हुए यमदूतों द्वारा ले जाये जाते हैं ।४१। जिन्होंने संसारमें कभी कुछभी दान नहीं दिया, वे दान हीन मनुष्यही ऐसी याचना भूख निवारणके लिये करते हुए जाते हैं । जिन्होंने दानदिया है वे चवेना ग्रहणकर सुखसे यम-लोकको जाया करते हैं ।४२।

एवं न्यायेन कष्टेन प्राप्ताः प्रेतपुरं यदा ।
प्रज्ञापितास्ततो दूतैर्निवेश्यते यमाग्रतः ॥४३॥

तत्र ये शुभकर्माणस्तांस्तु सम्मानयेद्यमः ।
स्वागतासनदानेन पाद्यार्घ्येण प्रियेण च ॥४४॥
धन्या यूय महात्मानो निगमोदितकारिणः ।
यैश्च दिव्यसुखार्थाय भवद्भिः सुकृतं कृतम् ॥४५॥
दिव्यं विमानमारुह्य दिव्यस्त्रीभोगभूषितम् ।
स्वर्गं गच्छध्वममलं सर्वकामसमन्वितम् ॥४६॥
तत्र भुक्त्वा महाभोगानन्ते पुण्यस्य संक्षयात् ।
यत्किंचिदल्पमशुभं पुनस्तदिह भोक्ष्यथ ॥४७॥
धर्मात्मानो नरा ये च मित्रभूता इवात्मनः ।
सौम्यं मुखं प्रपश्यति धर्मराजानमेव च ॥४८॥
ये पुनः क्रूरकर्माणस्ते पश्यन्ति भयानकम् ।
दंष्ट्राकरालवदनं भृकुटीकुटिलेक्षणम् ॥४९॥

इस प्रकारसे वहाँ मार्गमें ही कर्मोका न्याय प्राप्त करते हुए जीवात्मा कष्टके साथ प्रेतपुरीमें पहुँचते हैं और यमदूत उन्हें बताकर यमराजकेसमक्ष में खड़ा करते हैं ।४३। उन प्राणियों में जो शुभ कर्म करने वाले होते हैं उनका धर्मराजभी स्वागतकरते अर्घ्य पाद्य और आसनदेकर सम्मानकिया करते हैं ।४४। उन धार्मिक प्राणियोंसे यमराज कहा करते हैं-आप सब शास्त्रके अनुकूल कर्म करने वाले परममहात्मा और धन्यहो । आप लोगोने दिव्य सुख प्राप्य करनेके लिएही पुण्य कर्म किये हैं ।४५। यमराज धार्मिक प्राणियोंसे कहते हैं आपलोग दिव्यविमानोंपर आरूढ़होकर दिव्यांगनाओं के उपभोगका आनन्दस्वाद करतेहुए समस्त कामनाओंके प्रदान करने वाले निर्मल स्वर्गमें जाओ । वहाँ महाभोगोंके अन्तमें पुण्यके क्षीण हो जाने पर जो कुछ थोड़ा पाप शेष रहा होगा तो उसे यहाँ भोगोगे ।४६-४७। जो धर्मात्मा मित्रस्वरूप ऐसीआत्माके पुण्यपुरुष हैं वे धर्मराजकेरूपमेंभी सौम्य मुख पाते हैं ।४८। जो क्रूर तथा बुरे पापकर्म करनेवाले पुरुष होते हैं उन्हें यमराजका स्वरूपही अत्यन्त डरावना और विकराल दिखलाई देता है । उनके सामने तो यमराज बड़ी भयानक दाढ़ों से युक्त विकराल मुखकृति

वाले और चढ़ी हुई टेढ़ी भृकुटियों से कुटिल दृष्टि वाले दिखलाई दिया-करते हैं ।४६।

उर्ध्वकेशं महाश्मश्रु मूर्द्धप्रस्फुरिताधरम् ।
अष्टादशभुजक्रुद्धं नीलांजनचयोपमम् ॥५०॥
सर्वायुधोधोद्धतकरं सर्व दण्डेन तर्जयन् ।
सुमहामहिषारूढं दीप्ताग्निसमलोचनम् ॥५१॥
रक्तमाल्यांबरधरं महामेरुमिवोच्छ्रितम् ।
प्रलयाम्बुदनिर्घोषं पिबन्निव महोदधिम् ॥५२॥
ग्रसंतमिव शैलेन्द्रमुद्गिरन्तमिवानलम् ।
मृत्युश्चैव समीपस्थः कालानलसमप्रभः ।५३॥
कालश्चांजनसंकाशः कृतांतश्च भयानकः ।
मारी चोग्रमहामारी कालरात्रिश्च दारुणा ॥५४॥
विविधा व्याधमः कुष्ठा नानारूपा भयावहाः ।
शक्तिशूलांकुशधराः पाशचक्रासिपाणय: ॥५५॥
वज्रतुंडधरा रुद्राः क्षुरतूणधनुर्द्धराः ।
नानायुधधराः सर्वे प्रहावीरा भयङ्कराः ॥५६॥

पापियोंके समक्ष उनका स्वरूप शिरपर लम्बे केश-बड़ी दाढ़ी-मूँछ-फड़-फड़ाते हुए अधर-अठारह भुजा क्रोधसे पूर्ण और अञ्जनके समान वर्ण वाला होता है ।५०। पापात्मा जीवोंके सामने तो धर्मराज समस्त शस्त्रों से सुसज्जित हाथों वाले-सब प्रकारके दण्ड देने फटकार देने वाले-महा महिषपर आरूढ़ और जलतीहुई आगके समानरक्त एवं तेजपूर्ण नेत्रों वाले दिखाई देते हैं ।५१। पापी प्राणियोंके लिये यमका स्वरूप रक्तमाला और वस्त्रतुल्य भयानक घोरगर्जना करने वाले और समुद्रका पान करते हुए से स्थित दिखाईदेते हैं ।५२। उस समय यमराज ऐसे प्रतीत होते हैं मानो वे हिमाचल पर्वतको निगल रहे हैं-अग्निका वमन कररहे हैं ऐसे स्वरूप में धर्मराज स्वयंस्थित रहते हैं और उनके समीपमें कालानलके तुल्य कांति वाले मृत्यु स्थित रहते हैं। यमराज के दूतभी इधर-उधर रहते हैं जिनका

स्वरूपभी भयाभह होता है और इनके अतिरिक्त अञ्जनके समान कृष्ण वर्ण वाला काल-भयानक राजमारी-उग्र महामारी तथा दारुण कालरात्रि भी वहाँ यमके निकटमें विद्यमान रहते हैं ।५३-५४। वहाँ अनेक रूपवाले रोग, नाना विधि कुष्ठादि, शक्ति, त्रिशूल, अंकुश, पाश, चक्र खड्ग हाथों में धारण करने वाले दूत उपस्थित रहते हैं ।५५। यमदूतोंके पास वज्र, तुण्डधारी रुद्र, छुरे तर्कस और धनुष होते हैं। ये सभी नाना भाँतिके अस्त्रों को धारण करने वाले हैं, महान् वीर और अत्यन्त भयानक होते हैं ।५६।

असंख्याता महावीराः कालाञ्जनसमप्रभाः ।
सर्वायुधोद्यतकरा यमदूता भयानकाः ॥५७॥
अनेन परिचारेण वृत त घोरदर्शनम् ।
यमं पश्यन्ति पापिष्ठाश्चित्रगुप्त च भीषणम् ॥५८॥
निर्भर्त्सयति चात्यन्तं यमस्तान्पापकर्मणः ।
चित्रगुप्तश्च भगान्धर्मवाक्यैः प्रबोधयेत् ॥५९॥

यमदूतों की संख्या ही नहीं है अर्थात् असंख्य होते हैं । वर्णसे बिल्कुल काजलके तुल्य काले और सभी हाथों में अस्त्र-शस्त्र रखने वाले परम भयानक होते हैं ।६७। ऐसे परिकरसे घिरे हुए धर्मराजके भयानक स्वरूप को, अति भयङ्कर चित्रगुप्त को पापी प्राणी देखाकरते हैं ।५८। उस समय पापियों के सामने आतेही यमराज बुरीतरह ललकारके साथ डांटते हैं । चित्रगुप्त अनेक धर्मके बचनोंसे बोधन किया करते हैं ।५९।

नरकों के विभिन्न भेद वर्णन

भो भो दुष्कृतकर्माणः परद्रव्यापहारकाः ।
गर्विता रूपीवीर्य्येण परदारावमर्द्दकाः ॥ १ ॥
यत्स्वयं क्रियते कर्म तदिद भुज्यते पुनः ।
तत्किमात्मोपघातार्थं भवद्भिर्दूष्कृतं कृतम् ॥ २ ॥
इदानीं कि प्रलप्यध्वं पीडयमानाः स्वकर्मभिः ।
भुज्यताँ स्वानि कर्माणि नास्ति दोषो हि कस्यचित्॥३॥

एवं ते पृथिवीपालाः सप्राप्तास्तत्समीपतः ।
स्वकीयैः कर्मभिर्घोरैर्दुष्कर्मबलदर्पिणः ॥ ४ ॥
तानपि क्रोधसंयुक्तश्चित्रगुप्तो महाप्रभुः ।
संशिक्षयति धर्मज्ञो यमराजानुशिक्षया ॥ ५ ॥
भो भो नृपा दुराचाराः प्रजाविध्वसकारिणः ।
अल्पकालस्य राज्यस्कृते किं दुष्कृतं कृतम् ॥ ६ ॥
राज्यभोगेन मोहेन बलादन्यायतः प्रजाः ।
यद्दण्डिताः फलं तस्य भुज्यतामधुना नृपाः ॥ ७ ॥

महाराज चित्रगुप्त ने पापात्मा प्राणियोंसे कहा-अरे महान् पाप-कर्म करने वालो ! दूसरोंके धनका हरण करने वालो ! अनेक रूप-लावण्य तथा वीर्य-पराक्रम से गर्वित होने वालो ! दूसरोंकी स्त्रीसे रमण करने वालो ! तुमनेजो संसारमें ऐसे बुरेकर्म किये हैं अब उनके दण्डभोग भोगने पड़ेंगे । बताओ तुमने ही क्लेश के उत्पन्न करने के लिये ऐसे पाप क्यों किये थे ? ।१-२। इस समय तुम अपनेहीं कर्मोंसे उत्पीड़ित होतेहुए क्यों रोते चिल्लाते हो ? अब कर्मोंके फलोंको भोगो, इसमें अन्य किसीका कुछ भी दोष नहीं है ।३। सनत्कुमारजी ने कहा-इसी प्रकारसे अपने महाघोर बुरे कर्मोंसे युक्त और बलका घमण्ड रखने वाले राजालोग भी यमराजके सामने खड़े कियेजाते हैं ।४। महाप्रभु धर्मात्मा चित्रगुप्त यमराजके आदेश से अत्यन्त क्रोधके साथ उन राजाओं को शिक्षा देते हैं ।५। चित्रगुप्त कहते हैं-अरे दुराचारमग्न ! प्रजाकासर्वनाश करनेवाले राजाओ ! तुमने बहुतही स्वल्प समयतक राज्यभोग करनेमें भी ऐसा पाप क्यों किया ? ।६। हे नृपवृन्द ! आप लोगोंने राज्य भोगनेके कारण अन्याय और बलसे प्रजाकोदण्ड किया है । अब प्रजाके सतानेका फल भोगो ।७।

क्व तद्राज्यं कलत्रं च यदर्थमशुभं कृतम् ।
तत्सर्वं संपरित्यज्य यूयमेकाकिनः स्थिताः ॥ ८ ॥
पश्यामि तत्बलं नष्टं येन विध्वंसिताः प्रजाः ।
यमदूतैर्योज्यमाना अधुना कीदृशं भवेत् ॥ ९ ॥

एवं बहुविधैर्वाक्यैरुपलब्धा यमेन ते ।
स्वानि कर्माणि शोचंति तूष्णीं तिष्ठंति पार्थिवा ॥१०॥
इति कर्म समुद्दिश्य नृपाणां धर्मराड्यमः ।
तत्पापपंकशुद्धयर्थमिदं दुतानब्रवीत् च ॥११॥
भो भोश्चण्ड महाचण्ड गृहीत्वा नृपतीन्बलात् ।
नियमेन विशुद्धयध्वं क्रमेण नरकाग्निषु ॥१२॥
ततः शीघ्रं समादाय नृपान्संगृह्य पादयोः ।
भ्रामयित्वा तु वेगेन निक्षिप्योर्ध्वं प्रगृह्य च ॥१३॥
सर्वप्रायेण महताऽतीव तृप्ते शिलातले ।
आस्फलय ते तरसा वज्रेणेव महाद्रुमा ॥१४॥

अब वह तुम्हाराज्य और स्त्री कहाँ हैं जिनके लिये तुमने महान् पाप किये थे? अब यहाँपर तो तुम सबको छोड़कर अकेलेही उपस्थित हो ।८ मैं इससमय तुम्हारा वह समस्तबल नष्टहुआ देखरहाहूँ जिससे तुमने अपनी प्रजाका विध्वंस करडाला था । अबतो यमदूतोंके द्वारा अपराधीकी भाँति बँधेहुए कैसे हो ।९। सनत्कुमारजी ने कहा-यमराज के ऐसे अनेक बचन सुनकर राजा लोग चुपचाप अपने कर्मोंको सोचते और पछताते हैं ।१०। धर्मका न्याय करने वाले यमराज राजाओंके उन कर्मोंके उद्देश्यको लेकर उनके पापपंकसे शुद्धि पानेके लिये अपने दूतोंको आदेशदेते हैं । यमराजने कहा-हे चण्ड ! हे महाचण्ड ! तुम जबर्दस्ती इन राजाओं को पकड़ कर क्रमसे नरकरूपी आगमें डालदो और इनकी शुद्धिकरो और नियमका पूर्ण पालन करो ।११-१२। सनत्कुमारजीने कहा-यमराजकी आज्ञापातेही दूतों ने बलात्कार से राजाओंको पकड़ लिया और उनके दोनों पैरों को पकड़ कर जोरसे घुमाया और ऊपर उठाकर नीचे फेंक दिया ।१३। यम-दूत विशाल सन्तप्त शिलाओं को तलपर उन्हें पटककर महावृक्षके समान वज्र से बड़े बेगके साथ ताड़न करते हैं ।१४।

ततः सः रक्तं श्रोत्रेण स्रवते जर्जरीकृतः ।
निस्संज्ञः स तदा देही निश्चेष्टः संप्राजायते ॥१५॥

ततः स वायुना स्पष्टः स तैरुज्जीवितः पुनः ।
ततः पापबिशुद्धयर्थं क्षिपन्ति नरकार्णवे ।।१६।।
अष्टाविंशतिसंख्याभिः क्षित्यध सप्तकोटयः ।
सप्तमस्य तलस्यान्ते घोरे तमसि संस्थितः ।।१७।।
घोराख्या प्रथमा कोटिः सुघोरा तदधः स्थिता ।
अतिघोरा महाघोरा घोररूपा च पञ्चमी ।।१८।।
षष्ठी तलातलाख्या च सप्तमी च भयानका ।
अष्टमी कालरात्रिश्च नवमो च भयोत्कटा ।। १९ ।।
दशमी तदधश्चण्डा महाचण्डा ततोऽप्यधः ।
चण्डकोलाहला चान्या प्रचडा चंडनायिका ।।२०।।
पद्मा पद्मावती भीता भीमा भीषणनायिका ।
कराला दिकराला च वज्रा विंशतिमा स्मृता ।।२१।।

उस समय जब उनके कानोंसे रक्त टपकता है तब प्राणी जर्जर होकर चेतनाशून्य हो जाता है ।१५। फिर वायुका स्पर्शपाकर पुनः उनके द्वारा जीवित करके पापसे शुद्धि पानेके लिये नरकमें डाल दिया जाता है ।१६। वह नगर पृथ्वीके नीचे सातकरोड़ अट्ठाईसयोजन दूर सातवेंतलके अन्तमें घोर अन्धकारोंमें स्थित है ।१७। उन नरकोंके नाम इस प्रकार हैं प्रथम कोटि 'घोर' नामक है । उसके नीचे 'सुघोर' फिर क्रमसे अतिघोर, महाघोर और पांचवीं यातना का नाम घोर रूप है ।१८। छटी तलातल, सातवीं भयानक आठवीं कालरात्रि और नवमी यातनाका नाम भयोत्कटा है ।१९। इसकेभी नीचे दशवीं चण्ड, फिर महाचण्ड, चण्ड कोलाहल, प्रचण्ड चण्ड नामक हैं ।२०। इसी तरह फिर आगे पद्मा, पद्मावती, भीता, भीमा, भीषण नायिका, कराला, विकराला और बीसवीं वज्रा नामक है ।२१।

त्रिकोणा पञ्चकोणा च सुदीर्घा चाखिलार्तिदा ।
समा भीमबलात्युग्रा दीप्तिप्रायेति चाष्ठमी ।।२२।।
इति ते नामतः प्रोक्ता घोरा नरककोटयः ।
अष्टाविंशतिरेवैताः पापानां यातनात्मकाः ।।२३।।

तासां क्रमेण विज्ञेया: पञ्च पञ्चैव नायका: ।
प्रत्येक सर्वकोटीनां नामत: सन्निबोधत: ॥२४॥
रौरव: प्रथमस्तेषां रुवते यत्र देहिन: ।
महारौरवपीडाभिर्महांतोऽपि रुदति च ॥२५॥
तत: शीतं तथा चोष्णं पंचाद्या नायका: स्मृता: ।
सुघोर: सुमहातीक्ष्णस्तथा संजीवन: स्मृत: ॥२६॥
महातमो विलोमश्च विलोश्चापि कंटक: ।
तीव्रवेग: करालश्च विकराल: प्रकंपन: ॥२७॥
महावक्रश्च कालसूत्र: प्रगर्जन: ।
सूचीमुख: सुनेतिश्च खादक: सुप्रपीडन: ॥२८॥

इनके बाद में त्रिकोणा, पञ्चकोना, सुदीर्घा, अखिलार्त्तिदा, समाभीमवला, अभोग्रा और अन्तिम दीप्तमाया है ।२२। इस तरह घोर नरक कोटि के नामों वाली ये अट्ठाईस पापों की यातनायें होती हैं ।२३। उनमें से क्रम पाँच-पाँच नायक यातना समझनी चाहिये । इनमें से सब कोटियों में प्रत्येक नामसे विख्यात हैं ।२४। उनमें से प्रथम 'रौरव' है जहाँ जाकर सभी प्राणी पीड़ित होकर रोया करते हैं । महा रौरव की पीड़ा तो ऐसी विकट होती है कि बड़े पुरुष भी रुदन किया करते हैं ।२५। इसके बाद शीत और उष्ण पाँच आद्य नायक हैं जिन्हें सुघोर, सुमहातीक्ष्ण तथा संजीवन कहा गया है ।२६। महातम, विलोम, कण्टक, तीव्रवेग, कराल, विकराल, प्रकपन । ।२७। महावक्र, काल, कालसूत्र, प्रगर्जन, सूचीमुख, सुनेति, खादक, सुप्रपीडन ।२८।

कुम्भीपाक सुपाकौ च क्रकचश्चातिदारुण: ।
अङ्गारराशिभवन मेदोऽसृक्प्रहितस्तत: ॥२६॥
तीक्ष्णतुंडश्च शकुनिर्महासंवर्तक: क्रतु: ।
तप्तजतु: पङ्कलेप: प्रतिमांसस्त्रपूद्भव: ॥३०॥
उच्छ्वास: सुनिरुच्छ्‌वासो सुदीर्घ: कूटशाल्मलि: ।
दुरिष्ट: सुमहावाद: प्रवाह: सुप्रतापन: ॥३१॥

ततो मेघो वृष: शाल्म: सिंहव्याघ्रगजानन: ।
श्वसूकराजमहिषघूककोकवृकानना: ॥३२॥
ग्रहकुंभीननक्राख्या: सर्पकूर्माख्यवायसा: ।
गृध्रोभूकजलौकाख्या: शार्दूलक्रथकर्कटा: ॥३३॥
मण्डूक: पूतिवक्त्रश्च रक्ताक्ष: पूतिमृत्तिक: ।
कणधूम्रस्तथाग्निश्च कृमिगन्धिवपुस्तथा ॥३४॥
अग्नीध्रश्चाप्रतिष्ठश्च रुधिराभ: श्वभोजन: ।
लालाभक्षांत्रभक्षौ च सर्वभक्ष: सुदारुण: ॥३५॥

कुम्भीपाक, सुपाक, क्रकच, अतिदारुण, अंगारराशिभवन, मेरु, अमृक्प्रहित ।२९। तीक्ष्णतुण्ड, शकुनि, महासंवर्त्तक, क्रतु, तप्तजन्तु, पङ्कलेप, प्रतिमांस, त्रपूद्भव ।३०। उच्छ्वास, सुनिच्छ्वास, सुदीर्घ, कूटशाल्मलि, दुरिष्ट, सुमहावाद, प्रवाह, सुप्रतापन, ।३१। और मेघ वृष, शाल्म, सिंह, व्याघ्र, हाथीके मुखवाले ।३२। मगर, कुम्भीन, नक्र नामवाले, सर्प, कच्छप, काग नामक, गिद्ध, उल्लू जलौका नाम वाले, गीदड़, ऊंट, कैंकड़े धाम वाले ।३३। मेंढ़क, प्रतिवक्त, रक्ताक्ष, पूति, मृतिका, कणधूम्र, अग्नि, कृमि, गन्धि वपु । ।३४। अग्निध्र, अप्रतिष्ठ, रुधिराभ, श्वभोजन, लालाभक्ष, अन्त्र भक्ष, सर्वभक्ष, सुदारुण ।३५।

कंटक: सुविशालश्च विकट: कटपूतन: ।
अम्बरीष: कटाहश्च कष्टा वैतरणी नदी ॥३६॥
सुतप्तलोहशयन एकपाद: प्रपूरण: ।
असितालवनं घोरमस्थिभंग: सुपूरण: ॥३७॥
विलातसोऽसुयंत्रोपि कूटपाश: प्रमर्द्दन: ।
महाचूर्ण: सुचूर्णोऽपि तप्तलोहमयं तथा ॥३८॥
पर्वत: क्षुरधारा च तथा यमलपर्वत: ।
मूत्रविष्ठाश्रुकूपश्च क्षारकूमश्च शीतल: ॥३९॥
मुसलोलूखलं यन्त्रं शिलाशकटलांगलम् ।
तालपत्रासिगहनं महाशकटमण्डपम् ॥४०॥

समोहमस्थिभगश्च तप्तचलमयोगुडम् ।
बहुदुखं महाक्लेशः कश्मलं शमल मलम् ॥४१॥
हालाहलो विरूपश्च स्वरूपश्च यमानुगः ।
एकपादस्त्रिपादश्च तीव्रश्चाचीवरं तमः ॥४२॥

कण्टक, सुविशाल, विकट, कटपूतन, अम्बरीष, कटाह, कष्टदायक, वैतरणी, नदी ।३६। सुतप्त, लोहशयन, एकपाद, प्रपूरण, असितालवन, घोर अस्थिभङ्ग, सुपूरण ।३७। विलातस, असुयन्त्र, कूटपाश, प्रमर्दन, महाचूर्ण, असुचूर्ण, तप्तलोहमय ।३८। पर्वत, क्षुरधारा, यमल, पर्वत, मूत्र, विष्ठा, अश्रुकूप, क्षारकूप, शीतल ।३९। मूसल ऊखल, शिला, शकट, लांगल, तालपत्र, असिगहन, महाशटक मण्डप ।४०। समोह, अस्थिभंग, तप्त, चलमय, गुड़, वहुदुःख, महाक्लेश, शमल, मलात, ।४१। हलाहल, विरूप, स्वरूप, यमानुग, एकपाद, त्रिपाद, तीव्र, अचीवर, तम ।४२।

अष्टाविंशतिरित्येते क्रमशः पंचपंचकम् ।
कोटीनामानुपूर्व्येण पंच पंचैव नायकाः ॥४३॥
रौरवाय प्रबोध्यन्त नरकाणां शतं स्मृतम् ।
चत्वारिशच्च्यतं प्रोक्तं महानरकमण्डलम् ॥४४॥
इति ते व्यास संप्रोक्ता नरकस्य स्थितिर्मया ।
प्रसंख्यानाच्च वैराग्य शृणु पापगतिं च ताम् ॥४५॥

ये उपर्युक्त क्रमसे सात सौ नरक हैं और प्रतिकोटि में से पाँच-पाँच नायक हैं ।४३। रौरव के ही सौ नरक कहे गये हैं और चालीस सौ महानरक मण्डल कहा गया है ।४४। हे व्यासजी ! इस तरह मैंने आपको नरकों की स्थिति संख्याके सहित कही है । अब वैराग्य और उसकी पाप गति को भी सुनो ।४५।

नरक यातना वर्णन

एषु पापात्माः प्रपच्यन्ते शोष्यन्ते नरकाग्निषु ।
यातनाः भिर्विचित्राभिरास्वकर्मक्षयाद् भृशम् ॥ १ ॥

स्वमलप्रक्षयाद्यद्वदग्नौ धास्यन्ति धावतः ।
तत्र पापक्षयात्पापा नराः कर्मानुरूपतः ॥ २ ॥
सुगाढं हस्तयोर्बद्धा ततः शृङ्खलया नराः ।
महावृक्षाग्रशाखासु लम्ब्यन्ते यमकिंकरैः ॥ ३ ॥
ततस्ते सर्वयत्नेन क्षिप्ता दोलन्ति किंकरैः ।
दोल्यन्तश्चाति वेगेन विसंज्ञा यांति योजनम् ॥ ४ ॥
अन्तरिक्षस्थितानां च लोहभारशतं पुनः ।
पादयोर्बध्यते तेषाँ यमदूतैर्महाबलैः ॥ ५ ॥
तेन भारेण महता प्रभृश ताडिता नराः ।
ध्यायन्ति स्वानि कर्माणि तूष्णीं तिष्ठन्ति निश्चलाः ॥६॥
ततोऽकुंशैरग्निवर्णैर्लोहदंडैश्च दारुणैः ।
हन्यन्ते किंकरैर्घोरैः समन्तात्पापकर्मिणः ॥ ७ ॥

श्री सनत्कुमार जी ने कहा-इन उक्त नरकों में पापात्मा प्राणी गिराये जाते हैं और वे वहाँपर अनेक प्रकारकी यातनाओं द्वारा अपने कृत दुष्कर्मों के नाशहो जानेकर अत्यन्त तीव्र नरककी अग्नियोंमें सुखाये जाते हैं ।१। धातुओं के मैल को हटने के लिये जैसे उन्हें तीक्ष्ण अग्निमें रखते हैं उसी तरह पापी प्राणियोंको पाप-नाशके उद्देश्यसे ही अपने कर्मोंके अनुसारही नरकोंमें गिराया जाता है । २। वहाँ यमराज के दूत पापियोंके हाथों को शृङ्खलासे मजबूतीके साथ बाँधकर इसके पीछे महावृक्षकी शाखों में उन्हें लटकाते हैं ।३। तब वे पूर्ण यत्नद्वारा यमकिंकरों के फेंके हुए काँप उठते हैं और चेतना रहित होकर योजनों तक चले जाते हैं ।४। फिर महा बलवान यमदूत आकाशमें स्थितहोकर उनके पैरों में सौ भार लोहा बाँध देते हैं ।५। उस भारी बोझ से अत्यन्त ताड़ित मनुष्य अपने किये हुए दुष्कर्मों का स्मरण करते हैं और निश्चल एवं मौन रह जाया करते हैं ।६। इसके पश्चात् यमके दूत चारों ओर से अंकुशों तथा अग्नि के तुल्य दारुण लोहे के दण्डों से पीटते हैं ।७।

ततः क्षारेण दीप्तेन वह्नेरपि विशेषतः ।
समन्ततः प्रलिप्यन्ते तीव्रेण तु पुनः पुनः ॥ ८ ॥

द्रुतेनात्यंतलिप्तेन कृत्तांगा जर्जरीकृता: ।
पुनर्विदार्य्य चांगानि शिरसः प्रभृति क्रमात् ॥ ९ ॥
वृंताकवतप्रपच्यते तप्तलोहकटाहके: ।
विष्ठा पूर्णे तथा कूपे कृमीणां निचये पुनः ॥१०॥
मेदोऽसृक्पूयपूर्णायां वाप्यां क्षिप्यति ते पुनः ।
भक्ष्यंते कृमिभिस्तीक्ष्णैर्लोहतुण्डैश्च वायसैः ॥११॥
श्वभिर्दंशैर्वृकैर्व्याघ्रै रौद्रैश्च विकृताननैः ।
पच्यन्ते मत्स्यवच्चापि प्रदीप्तांगारराशिषु ॥१२॥
भिन्नाः शूलैः सुतीक्ष्णैश्च नराः पापेन कर्मणा ।
तैलयन्त्रेषु चाक्रम्य घोरैः कर्मभिरात्मनः ॥१३॥
तिला इव प्रपीड्यन्ते चक्राख्ये जनपिंडकाः ।
भ्रज्यते चातपे तप्ते लोहभाण्डेष्वनेकधा ॥१४॥

इसके अनन्तर बार-बार अत्यन्त जलते हुए आगके अङ्गारों से उनका सारा शरीर लिप्त किया जाता है ।८। अत्यन्त लिप्त होने के कारण छिन्नाङ्ग और अति जर्जरी भूत होकर क्रमशः मस्तक के विदीर्ण होनेपर पके हुए बैंगन के सदृश लोहे के संतप्त बड़े कड़ाह में पकाये जाते हैं । इसी तरह पुनः विष्टासे भरे हुए कूपमें और कीड़ोंके समुदाय में डाल दिये जाया करते हैं ।९-१०। इसके अनन्तर उन पापी मनुष्यों को चर्बी, रुधिर और मवादसे परिपूर्ण बावड़ी में फेंक दिया जाया है । वहाँ से बुरी तरह बहुत ही तीक्ष्ण कीड़ोंके द्वारा तथा लोहे जैसी चोंचवाले कौओं से काटे और खाये जाते हैं ।११। इसी तरह कुत्ते डाँस, भेड़िये, भयानक और अत्यन्त विकट मुँह वाले बाघ आदि हिंसक पशुओं से काटे जाते हैं तथा जलते हुए अङ्गारों में मछली की भाँति पकाये जाते हैं ।१२। वहाँ फिर ये प्राणी अपनेही किये हुए बड़े-बड़े पापों के कारण अत्यन्त तेज त्रिशूल के छेदन हुए कोल्हू में डाल दिये जाते हैं ।१३। वहां तिलों के समान उनके शरीर पीसे जाते हैं और खूब सन्तप्त एवं आग से तपे हुए लोहे के पात्रों में उनकी भुनाई की जाती है ।१४।

तैलपूर्णकटाहेषु सुतप्तेषु पुनः पुनः ।
बहुधां पच्यते जिह्वा प्रपीडयोरसि पादयोः ॥१५॥

यातनाश्च महत्योऽत्र शरीरस्यापि सर्वतः ।
निःयेषनरकेष्वेवं क्रमन्ति क्रमशो नराः ॥१६॥
नरकेषु च सर्वेषु विचित्रा यमयातनाः ।
याम्यंश्च दीयये व्यास सांगेषु सुकष्टदाः ॥१७॥
ज्वलदंगारमादाय मुखमापूर्य ताड्यते ।
ततः क्षारेण दीप्तेन ताम्रेण च पुनः पुनः ॥१८॥
घृतेनात्यन्ततप्तेन तदा तैलेन तन्मुखम् ।
इतस्ततः पीडयित्वा भृशमापूर्य हन्यते ॥ १९ ॥
विष्ठाभिः कृमिभिश्चापि पूर्यमाणाः क्वचित्क्वचित् ।
परिष्वजति चात्यग्रां प्रदीप्तां लोहशाल्मलीम् ॥२०॥
हन्यन्ते पृष्ठदेशे च पुनर्दीप्तैर्महाघनैः ।
दन्तुरेणातिकुंठेन क्रकचेन बलीयसा ॥२१॥

तेलसे पूर्ण गर्म-गर्म कड़ाहमें बार-बार उनके पैर और हृदय में पीड़ा देकर जिह्वाको पकाया जाता है ।१५। इसी प्रकारसे नरकों की बड़ी ही भयानक तीव्र यातनायें पाकर पापी मनुष्य समस्त नरक में क्रम से भेजे जाते हैं ।१६। हे व्यासजी ! इन सम्पूर्ण नरकोंकी यातनायें अत्यन्त कष्ट देने वाली बहुत ही अद्भुत होती है । वहाँ जबर्दस्ती से उन यमके दूतों के द्वारा मनुष्य के सभी अंगोंको महान कष्ट दिया जाता है ।१७। जलते हुए अंगारे और कोयले मुँह में भरकर ताड़ना दी जाती है और संतप्त अंगारों से तथा तांबे की शलाकाओं से जलाया जाता है ।१८। कभी-कभी गर्म तेल या घृत मुख में भरकर खूब पीड़ा देकर पीटा जाता है ।१९ कहीं पर मल और कीड़ों से भरे हुए अत्यन्त उग्र लोहे की शाल्मली को लिपटा देते हैं ।२०। इसके पश्चात् सुर्ख गर्म लोहे की घनों से पीठ में चोट दीजाती है और बड़े-बड़े दाँतोंवाले आरोसे चिराई की जाती है ।२१

शिरः प्रभृति पीडयन्ते घोरैः कर्मभिरात्मजैः ।
खाद्यंते च स्वमांसानि पीयते शोणितं स्वकम् ॥२२॥
अन्नं पानं न दत्तं यैः सर्वदा स्वात्मपोषकैः ।
इक्षुवत्ते प्रपीडयते जर्जरीकृत्य मुद्गरैः ॥२५॥

असितालवने घोरे छिद्यंते खण्डशस्ततः ।
सूचीभिर्भिन्नसर्वांगास्तप्तशूलाग्ररोपिताः ॥२४॥
संचाल्यमाना बहुशः क्लिश्यंते न म्रियंति च ।
तथा च तच्छरीराजि सुखदुःखसहानि च ॥२५॥
देहादुत्पाटय मांसानि भिद्यंते स्वैश्च मुद्गरैः ।
दंतुराकृतिभिर्घोरैर्यमदूतैर्बलोत्कटैः ॥२६॥
निरुच्छ्वासे निरुच्छ्वासास्तिष्ठन्ति नरके चिरम् ।
उत्ताडयन्ते तथोच्छ्वासे वालुकासदने नराः ॥१७॥
रौरवे रोदमानाश्च पीड्यन्ते विविधर्वधैः ।
महारौरवपीडाभिर्महांतोऽपि रुदंति च ॥२८॥

उनके ही घोर दुष्कर्मोंके कारण उनके मांस खाये तथा उनका रुधिर पीया जाता है । वहाँ नरकोंमें पापात्मा पुरुष इसी भाँति परम पीड़ित किये जाते हैं ।२२। जिन्होंने कभी किसीको अन्न का दान न देकर केवल अपने ही शरीर का पोषण किया था वे वहाँ बड़े-बड़े मुगदरों से खूबही कूटे तथा गन्ने के समान पेरे भी जाते हैं ।२३। फिर महाघोर असिताल वन में खण्ड खण्ड करके छेदित होते हैं और सुईयों से उनके समस्त अंग भिन्न हो जाते हैं । इसके पश्चात् तपाये हुए त्रिशूल पर रख दिया जाता हैं ।२४। इस तरह वहाँ उन पापी प्राणियों को अत्यन्त कष्ट का अनुभव होता है किन्तु मरते नहीं उनको तो केवल दुःखका अनुभव करनेके लिये ही ऐसी पीड़ा दी जाती है और उनका शरीर वह सभी सहन करनेके योग्य होता है ।२५। अति बलवान् दन्तुर आकार वाले घोर यमदूतों के द्वारा मुग्दरों से देहका माँस उखाड़ कर भेदन किया जाता है ।२६। निरुच्छ्वास नाम वाले नरकमें बिना साँस लिये ही स्थिर रहना पड़ता है । उच्छ्वास नामक नरक में मनुष्य बालूके घर में ताड़ित किये जाते हैं ।२७। रौरव नामक नरक में रुदन करते हुए पापी मनुष्य अनेक वधों से पीड़ित होते हैं और महारौरव नरक में तो बड़े-बड़े पुरुष भी रो पड़ते ।२८।

परसु वक्त्रे गुदे मुण्डे नेत्रयोश्चैव मस्तके ।
निहन्यंते घनैस्तीक्ष्णैः सुतप्तैर्लोहशंकुभिः ।।२९॥

सुतप्तवालुकायां सु प्रयोज्यंते मुहुर्मुहुः ।
जतुपके भृशं तप्ते क्षिप्ताः कृन्दन्ति विस्वरम् ॥३०॥
कुम्भीपाकेषु पच्यते तप्ततैलेषु वै मुने ।
पापिनः क्रूरकर्माणोऽत्यह्यैषु सर्वथा पुनः ॥३१॥
लालाभक्षेषु पापास्ते पात्यंते दुःखदेषु वै ।
नानास्थानेषु च तथा नरकेषु पुनः पुनः ॥३२॥
सूचीमुखे महाक्लेशे नरके पात्यते नरः ।
पापी पुण्यविहीनश्च ताडयते यमकिंकरैः ॥३३॥
लोहकुम्भे विनिक्षिप्ताः श्वसन्तश्चशनैः शनैः ।
महाग्निना प्रपच्यते स्वपापैरेव मानवा ॥३४॥
दृढं रज्ज्वादिभिर्बद्ध्वा प्रपीडयते शिलासु च ।
क्षिप्यंते चान्धकूपेषु दश्यते भ्रमरैर्भृशम् ॥३५॥

पैरोंमें, गुदामें, मुखमें, शिरमें, नेत्रोंमें सर्वत्र अत्यन्त तपी हुई लोहेकी शलाकाके द्वारा अत्यन्त ताड़ना दीजाती है ।२९। वहाँ खूब तपीहुई रेतमें उन्हें डालदिया जाता है तथा जीवोंसे परिपूर्ण कीचड़में फेंकदेते हैं जहाँकि स्वरहीन होकर वे रुदन कियाकरते हैं ।३०। वे मुने ! कुम्भीपाक नामवाले नरकमें अत्यन्त तपाये हुए तेलमें पापी लोगों को डालकर पकाते हैं । यह यातना उनको दीजाती है जो बहुत ही क्रूरतासे पूर्ण करनेवाले इस संसार में रहे होते हैं ।३१। नरकोंमे ऐसे उग्र दुष्कर्म करने वाले पापात्मा मनुष्यों को अत्यन्त कष्टदायक लालाभक्ष नरकों में तथा अनेक ऐसे ही भीषण नरकोंमें बारम्बार गिराया जाता है ।३२ सर्वथा पुण्यसे हीन महापापी प्राणियोंको महान्क्लेश देनेवाले सूचीमुख नामक नरकमें यमदूतोंके द्वारा बलात् गिरा दियाजाता है और वहाँ अनेकतरहकी ऊपरसे ताड़नाभी दी जाती है ।३३। लोहकुम्भमें पतितपापी धीरे-धीरे साँस लिया करते हैं । अपने पाप कर्मों के कारण वहाँ मनुष्य महाग्नि के द्वारा पकाये जाते हैं ।३४।दृढ़ रस्सीसे बाँधकर शिलाओं पर यातना दीजाती है तथा अन्ध कूपों में डाल दिये जाते हैं जहाँ भ्रमरोंसे वे खूब ही डसे जाया करते हैं ।३५।

कृमिभिर्भिन्नसर्वांगाः शतशो जर्जरीकृताः ।
सुतीक्ष्णक्षारकूपेषु क्षिप्यन्ते तदनन्तरम् ॥३६॥
महाज्वालेऽत्र नरके पापाः क्रदन्ति दुःखिताः ।
इतश्चेतश्च धावन्ति दह्यमानास्तदर्चिषा ।३७॥
पृष्ठे चानीय तुण्डाभ्याँ विन्यस्तस्कंधयोजिते ।
तयोर्मध्येन चाकृष्य बाहुपृष्ठेन बाढतः ॥३८॥
बद्धाः परस्पर सर्वे सुभृशं पाशरज्जुभिः ।
बद्धपिण्डास्तु दृश्यते महाज्वाले तु यातनाः ॥३९॥
रज्जुभिर्वेष्टिताश्चैव प्रलिप्ताः कर्दमेन च ।
करीषतुषवह्नौ च पच्यंते न म्रियंति च ॥४०॥
सुतीक्ष्ण चरितास्ते हि कर्कशासु शिलासु च ।
आस्फाल्य शतशः पापाः रच्यते तृणवत्ततः ॥४१॥
शरीराभ्यंतरगतैः प्रभूतैः कृमिभिर्नराः ।
भक्ष्यते तीक्ष्णवदनैरात्मदेहक्षयाद् भृशम् ॥४२॥

जब कीड़ों से काटे हुए होकर उनके सब अङ्ग छिन्न एवं विदीर्ण हो जाते हैं तो फिर उन्हें अत्यन्त तपी हुई भूमलमें फेंक देते हैं ।३६। इस महान् ज्वालावाले नरकमें पापी परम उत्पीड़त एवं दुःखित होकर रोया करते हैं और इधर-उधर लपट से भस्मीभूत होकर दौड़ लगाया करते हैं ।३७। मुखों द्वारा पीठपर लाकर कन्धे पर रखके बाहु तथा पीठ से या दोनोंके मध्यभाग से अत्यन्त वेगसे खींचकर पाशकी रस्सोसे बंधेहुए समस्त प्राणी महा-ज्वाल नामक नरकमें बद्ध पिण्ड हुए सब यातनाओं को देखा करते हैं ।३८-३९। नरक में पापी पुरुष रस्सी से बद्ध तथा कीचड़ से लिप्त आरण्यक उपलों व भुस की अग्नि में पकाये जाते हैं और मरते नहीं हैं, कष्टका घोर अनुभव किया करते हैं ।४०। कठोरतम शिलाओं पर बड़ी तेजीसे जाते हुए सैकड़ों स्थानों में ताड़न करके तिनकों की तरह भूने जाते हैं ।४१। शरीरके अन्दर प्रविष्ट तीव्र मुख वाले कीड़ोंसे अपने देहके होने के कारण खूबही खाये जाते हैं ।४२।

क्रमीणां निचये क्षिप्ताः पूयमांसस्थिराशिषु ।
तिष्ठत्युद्विग्नाहृदया पर्वताभ्यां निपीडिताः ॥४२॥
तप्तेन न वज्रलेपेन शरीरमनुलिप्यते ।
अधोमुखोर्ध्वपादश्च तातप्यंते स्म वह्निना ॥४३॥
वदनांतः प्रविन्यस्तां सुप्रतप्तामयोगदाम् ।
ते खादन्ति पराधीनास्तैस्ताड्यन्ते च मुद्गरैः ॥४४॥
इत्थं व्यास कुकर्माणो नरकेषु पचंति हि ।
वर्णयामि विवर्णत्वं तेषां तत्त्वाथ कर्मिणाम् ॥४५॥

कीड़ों के समुदाय में फैंके हुए तथा पीब माँस और अस्थियों के मध्यमें डालेहुए अत्यन्त दुःखित मनमें उन्हें रहना पड़ता है ।४२। तपेहुए वज्रलेप से उनका शरीर लिप्त रहता है और उनका मुख नीचे की ओर और पैर ऊपर करके फिर ताप दिया जाता है जिसके कारण बड़ी वेदना होती है। ।४३। वहाँ पापी पुरुषों के मुखमें अन्दर अत्यन्त तप्त लोहेकी गदा दी जाती है जिसे वे विवश होकर खाते हैं और यमके दूतोंके द्वारा ऊपरसे खूब ही ताड़ित भी किया जाता है ।४४। हे व्यासजी ! इस संसार में बुरे कर्म करने वाले प्राणी परलोक में जाकर महान् से महान् नरकों की यातनायें भोगा करते हैं। अब मैं पापी पुरुषों के तत्त्व का वर्णन करता हूँ ।४५।

नरक के विशेष कष्टों का वर्णन

मिथ्यागमं प्रवृत्तस्तु द्विजिह्वाख्ये च गच्छति ।
जिह्वार्द्धकोशविस्तीर्णैर्हलैस्तीक्ष्णैः प्रपीडयते ॥ १ ॥
निर्भर्त्सयति यः क्रूरो मातरं पितरं गुरुम् ।
विष्ठाभिः कृमिमिश्राभिर्मुखमापूर्य हन्यते ॥ २ ॥
ये शिवायतनारामवापीकूपतडागकान् ।
विद्रवंति द्विजस्थानं नरास्तत्र रमन्ति च ॥ ३ ॥
काममुद्वर्तनाभ्यंगं स्नानपानाम्बुभोजनम् ।
क्रीडनं मैथुनं द्यूतमाचरन्ति मदोद्धताः ॥ ४ ॥

पेचिरे विविधैर्घोरैरिक्षुयंत्रादिपीडनैः ।
तिरयाग्निषु पच्यंते यावदाभूतसंप्लवन् ॥ ५ ॥
तेन तेनैव रूपेण ताडयन्ते पारदारिकाः ।
गाढमालिंग्यते नारी सुतप्तां लोहनिर्मिताम् ॥ ६ ॥
पूर्वाकाराश्च पुरुषाः प्रज्वलन्वि समंततः ।
दुश्चारिणीं स्त्रियं गाढमालिंगन्ति रुदंति च ॥ १० ॥

श्री सनत्कुमार जी ने कहा-मिथ्या शास्त्रमें प्रवृत्ति रखने वाला पुरुष द्विजिह्व नामक नरकमें जाता है और वहाँ जीव के समान आधे कोस तक फैले हुए हलों से पीड़ित होता है ।१। जो अत्यन्त क्रूर स्वभाव वाला पुरुष अपने माता-पिता को ललकारता है । तथा गुरुको फटकार देता है वह वहाँ कीड़ों से पूर्ण विष्ठा मुखमें भरकर पीटा जाता है ।१। जो शिव के मन्दिर-बाग-बावड़ी तथा कूाको तोड़ते हैं या सरोवर को नष्ट करते हैं अथवा ऐसे स्थान का नाश किया करते हैं जहाँ मनुष्य रमण करते हैं किम्बा किसी ब्राह्मण के स्थान को नष्ट भ्रष्ट करते हैं वे प्रलय काल तक नरक की अग्नि में पड़े रहा करते हैं ।३। जो मनुष्य काम क्रीड़ा के मदमें डूबे हुए उद्वर्त्तन (उबटन) स्नान-पान-अल-भोजन क्रीड़ा और मैथुन तथा द्यूत करते हैं वे अनेक तरह के कोल्हू के घोर उत्पीड़िन से वहाँ नरक में क्लेशित किये जाया करते हैं और प्रलयके समय पर्यन्त नरक की महाग्नि में पड़े हुए दुःख भोगते रहते हैं ।४-५। जो पराई स्त्री के साथ भोग करते हैं वे वहाँ नरक में उसी प्रकार से ताड़ित किये जाते हैं । लोहे की संतप्त स्त्री से उन्हें आलिंगन कराया जाता है जिससे उनका सारा शरीर झुलसा जाता है ।६। पूर्व के आर आकार वाले पुरुष सब ओर से जलते लगने लगते हैं और व्यभिचारिणी का बड़े बेग से आलिंगन करके रोते जाते है ।७।

ये शृण्वंति सतां निंदां तेषां कर्णप्रपूरणम् ।
अग्निवर्णैभ्यः कीलैस्तप्तैस्ताम्रादिनिर्मितैः ॥ ८ ॥
त्रपुसीसारकूटाद्भिः क्षीरेण च पुनः पुनः ।
सुतप्ततीक्ष्णतैलेन वज्रलेपेन वा पुनः ॥ ९ ॥

क्रमादापूर्य कर्णास्तु नरकेषु च यातनाः ।
अनुक्रमेण सर्वेषु भवंत्येताः समततः ॥१०॥
सर्वेन्द्रियाणामप्येवं क्रमात्पापेन यातनाः ।
भवन्ति घोराः प्रत्येकं शरीरेण कृतेन च ॥११॥
स्पर्शदोषेण ये मूढ़ाः स्पृशंति च परस्त्रियम् ।
तेषाँ करोऽग्निवर्णाभिः पांसुभि, पूर्यते भृशम् ॥१२॥
तेषां क्षारादिभिः सर्वैः शरीरमनुलिप्यते ।
यातनाश्च महाकष्टाः सर्वेषु नरकेषु च ॥१३॥
कुर्वन्ति पित्रोर्भ्रूकुटिं करनेत्राणि ये नराः ।
वक्त्राणि तेषां सीतानि कीर्यते शंकुभिर्दृढम् ॥१४॥

जो यहाँ सत्पुरुषोंकी निन्दा किया करते हैं उनके वहाँ नरक में आगके तुल्य तप्त लोहे तथा तामेकी कीलोंसे कान भर दिये जाते हैं ।८। इसके अनन्तर रांग और पीतल गलाकर जल-दूध या तप्त तेज तेलसे किम्बा बज्र लेपसे क्रमशः कानों को भरकर यह अत्यन्त वेदना सभी नरकों में क्रमसे दी जाती है ।९-१०। इसीतरह सम्पूर्ण इन्द्रियोंके द्वारा किये गये पापों से तथा प्रत्येक शरीर के अंगोंसे किये गये पापों के क्रम के अनुसार नरकमें बहुत सख्त यातना मिलती है ।११। जो पुरुष केबल मूढ़ता वश स्पर्शके दोषसे ही पराई स्त्री का स्पर्श हाथ से किया करते हैं उनने हाथ अग्नि के समान सन्तप्त लाल धूलि से भरकर जलाये जाते हैं और उनका सम्पूर्ण शरीर गर्म राख आदिसे दिप्त किया जाता है । इस तरह सभी नरकों में बहुत ही कष्टदायक पीड़ा दी जाती है ।१२-१३। जो मनुष्य संसारमें अपने माता-पिता को हाथ या आखें दिखाया करते हैं उनके मुँह ऊपर तक दृढ़ता के साथ कीलों से भर दिये जाते हैं ।१४।

यैरिन्द्रयैर्नरा ये च विकुर्वंति परस्त्रियम् ।
इन्द्रियाणि च तेषाँ वै विकुर्वंति तथैव च ॥१५॥
परदारांश्च पश्यन्ति लुब्धाः स्तब्धेन चक्षुषा ।
सूचीभिश्चाग्निवर्णाभिस्तेषां नेत्रप्रपूरणम् ॥१६॥

क्षाराद्यैश्च क्रमात्सर्वा इहैव यमयातना: ।
भवन्ति मुनिशार्दूल सत्यं सत्यं न संशय: ।।१७।।
देवाग्निगुरुविप्रेभ्यश्चानिवेद्य प्रभुंजते ।
लोहकीलशतैस्तप्तैस्तज्जिह्वास्यं च पूर्यते ।।१८।।
ये देवारामपुष्पाणि लोभात्सगृह्य पाणिना ।
जिघ्रन्ति च नरा भूय: शिरसा धारयन्ति च ।।१९।।
आपूर्यते शिरस्तेषां तप्तैर्लोहस्य शकुभि: ।
नासिका वातिबहुलैस्तत: क्षारादिभिर्भृशम् ।।२०।।
ये निंदन्ति महात्मान वाचकं धर्मदेशिकम् ।
देवाग्निगुरुभक्तांश्च धर्मशास्त्रं च शाश्वतम् ।।२१।।
तेषामुरसि कण्ठे च जिह्वायां दंतसन्धिषु ।
तालुन्योष्ट नासिकायाँ मूर्ध्नि सर्वांगसन्धिषु ।।२२।।
अग्निवर्णास्तु तप्ताश्च त्रिशाखा लोहशंकव: ।
आखिद्यते च बहुश: स्थानेष्वेतेषु मुद्गरैः ।।२३।।

जिस अपनी इन्द्रियों से मनुष्य पराईस्त्रीको दूषित कियाकरते हैं उनकी वही इन्द्रिय विकृत होजाती है ।१५। रूपके लालची जो पुरुष चंचल नेत्रों से पराई स्त्रीको देखते हैं उनके नेत्र नरक में अग्नि के समान लाल गर्म सुईयोंसे तथा गर्म राखसे भर दिये जाते हैं ।१६। हे श्रेष्ठ मुनिवर ! नरक में इस प्रकारसे यमराजके द्वारा दी हुई यातनायें प्राप्यहोती है-यह सर्वथा अक्षरश: सत्य है-इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है ।१७। जो पुरुष देवता-अग्नि-गुरु और ब्राह्मणों को दिये बिना ही स्वयं खा लेते हैं, उनकी जीभ और मुँह लोहे की सैंकड़ों कीलों से भर दिये जाते हैं ।१८। जो मनुष्य देवता और बागके पुष्पों को हाथ से लेकर सूंघते हैं और फिर शिर पर धारण कर लेते हैं उनका शिर तप्त लोहे की कीलोंसे ठोका जाता है और उनकी नासिका में गर्म राख आदि भरदी जाया करती है ।१९-२०। जो पुरुष महात्मा-धर्मात्मा-उपदेशक-देवता-अग्नि-गुरु और भक्तोंकी तथा सनातन धर्म की एवं धर्मशास्त्रकी निन्दाकरते हैं उनके हृदय, कंठ तथा जिह्वा

में तथा दाँतों की सन्धियों में, तालु में, ओटों में, नासिका में, मस्तक में तथा समस्त अंगों के जोड़ों में अग्नि के तुल्य तप्त तीन शिखा वाली कीलें मुद्गरों से ठोक दी जीती हैं।२१-२२-२३।

ततः क्षारेण दीप्तेन पूर्यंते हि समंततः।
यातनाश्च महत्यो वै शरीरस्याति सर्वतः ॥२४॥
अशेषनरकेष्वेव क्रमन्ति क्रमश पुनः।
ये गृह्णन्ति परद्रव्य पद्भ्यां विप्र स्पृशंति च ॥२५॥
शिवोपकरणं गां च ज्ञानादिलिखित च यत्।
हस्तपादादिभिस्तेषामापूर्यते समंततः ॥२६॥
नरकेशु च सर्वेषु विचित्रा बहुयातनाः।
भवन्ति बहुशः कष्टाः पाणिपादेसमुद्भवाः ॥२७॥
शिवायतनपर्यन्ते देवारामेषु कुत्रचित्।
समुत्सृजति ये पापाः पुरीष मूत्रमेव च ॥२८॥
तषाँ शिश्नं सवृषणं चूर्ण्यंते लोहमुद्गरैः।
सूचीभिरग्निवर्णाभिस्तथा त्वापूर्यंते पुनः ॥२९॥

इसके पश्चात् जलती हुई राखसे समस्त अंग में लेपन किया जाता है जिससे सम्पूर्ण शरीरमें पूरी यातना होती है।२४। जो कोई पराये धन को ले लेते हैं तथा पैरोंसे ब्राह्मण के शरीर का स्पर्श करते हैं वे क्रम से सभी नरकों में जाकर पूरी यातना भोगते हैं।२५। जो शिव या किसी भी देवता की पूजा की वस्तुओं को, गायको मथा ज्ञान के लेख एवं ज्ञानपूर्ण ग्रन्थ को पैरों से छूते हैं उनके हाथ पैर आदि कीलों से ठोके जाते हैं।२४ उनको अन्य सभी नरकों में जाकर हाथ-पैरों की बहुत कड़ी यातनायें भोगनी पड़ती हैं जिनसे अत्यन्त कष्ट होता है।२७। जो पापात्मा पुरुष शिव-मन्दिर की सीमा में देवोद्यान में किसी भी स्थान पर मल या मूत्र का त्याग किया करते हैं उनकी अण्डले सहित उपस्थेन्द्रिय लोहे के मुद्गरों से पीसी जाती है तथा अग्निके समान तप्त सुइयोंसे पीसी जाती है।२८-२९

ततः क्षारेण महता तीव्रेण च पुनः पुनः।

द्रुतेन पूर्यते गाढं गुदे शिश्ने च देहिपः ॥३०॥
मना सर्वेन्द्रियाणाँ च यस्माद् दुःखं प्रजायते ।
धने सत्यपि ये दानं न प्रयच्छन्ति तृष्णया ॥ ३१॥
अतिथि चावमन्यंते काले प्राप्ते गृहाश्रमे ।
तस्मात्ते दुष्कृतं प्राप्य गच्छन्ति निरयेऽशुचौ ॥३२॥
येऽन्नं दत्वा हि भुजति न श्वभ्यः सह वायसैः ।
तेषाँ च विवृत्तं वक्त्रं कीलकद्वयताडितम् ॥३३॥
कृमिभिः प्राणिभिश्चोग्रैर्लोहतुण्डैश्च वायसैः ।
उपद्रवैर्बहुविर्धरुग्रैरंतः प्रपीडयते ॥३४॥
श्यामश्च शवलश्चैव यममार्गानुरोधकौ ।
यो स्तस्ताभ्यां प्रयच्छामि तौ गृह्णीतामिमं बलिम् ॥३५॥
ये वा वरुणवायव्यायाम्या नैर्ऋत्यवायासाः ।
वायसाः पुण्यकर्माणस्ते प्रगृह्णान्तु मे बलिम् ॥३६॥
शिवमभ्यर्च्य यत्नेन हुत्वाग्नो विधिपूर्वकम् ।
शैवैर्भन्त्रैर्बलि ये च ददन्ते न च ते यमम् ॥३७॥

इसके अनन्तर उस पापीकी गुदा और लिगमें बहुत ही गर्म राख या खारी वस्तु भर दीजाती है ।३०। इसमें उन्हें ऐसी तीव्रवेदना होती है कि जिससे मन तथा समस्त इन्द्रियों को बड़ाही अधिक कष्टहोता है । जो मनुष्य अपने पाप धन होने परभी तृष्णा या कृपणतासे बिल्कुल दान नहीं किया करते हैं और समयपर घरमें आये हुए अतिथिका तिरस्कार देते हैं इससे उन्हें बड़ाभारी पापलगता है और उस पापसे वे नरक में जाते हैं ।३१-३२ जो कुत्ते और काकोंको बलि न देकर स्वयं भोजनकर लेते हैं उनका कंठ और मुख दोनों कीलों के द्वारा ताड़ित किये जाते हैं।३३। ऐसे पापी प्राणी कोड़े, हिंसक जन्तु, लोहेके समान सख्त चोंच वाले काकोंसे पीड़ित होते हैं और अन्य अनेक उपद्रवों से खूब ही नरकमें सताये जाते हैं ।३४। यमराज के श्याम और सबल नाम वाले दो श्वान हैं जो उनके मार्ग को रोका करते हैं–मैं उन दोनों को बलि समर्पित करता हूँ–वे दोनों इन

बलि को ग्रहण करें। इस प्रकार से ही जो पश्चिम-वायव्य दिशाके तथा उत्तर-नैऋत्य दिशाके पुण्यात्मा कहे हैं वे मेरा बलिदान ग्रहण करें। जो यत्न पूर्वक शिव की पूजा कर और विधि सहित अग्निसे हवन करके शिव मन्त्रों द्वारा बलिदान किया करते हैं वे फिर यमराज का मुख नहीं देखते हैं।३५-३६-३७।

पश्यंति त्रिदिवं याँति तस्माद्द्द्यादिदने।
मण्डलं चतुरस्त्रं तु कृत्वा गंधादिवासितम्।।३८।।
धन्वन्तर्यर्थमीशान्यां प्राच्यामिद्राय नि क्षिपेत्।
याम्यां यमाय वारुण्या सुदक्षोमाय दक्षिणे।।३९।।
पिपृभ्यस्तु विनिःक्षिप्य प्राच्यामर्यंमण ततः।
धातुश्चैव विधातुश्च द्वारदेशे विनिर्क्षिपेत्।।४०।।
श्वभ्यश्च श्वपतिभ्यश्च वयोभ्यो विक्षिपेद् भुवि।
देवः पितृमनुष्यश्च प्रेतैर्भूतैः सगुह्यकैं।।४१।
वयोभिः कृमिकीटैश्च गृहस्थश्चोपजीव्यते।
स्वाहाकारः स्वधाकारो वषट्कारस्तृतीयकः।

ऐसा विधान नित्य नियमसे करने वाले लोग सीधे स्वर्ग लोक को ही चले जाते हैं। इसलिये प्रतिदिन चार हाथका मण्डल बनाकर उसे गन्धाक्षतादिसे सुगन्धित करे। फिर ईशानदिशामें धन्वन्तरि वैद्य और पूर्वदिशा में इन्द्रदेवको बलिदानदेवे। उत्तरमें यमको और पश्चिममें सुदक्षोमको तथा दक्षिणमें पितरोंको बलिदेवे।३८-३९। प्राच्य दिशामें सूर्यको भाग देवे-द्वार देशमें धाता तथा विधाताको भाग देवे।४०। श्वानोंके लिये तथा श्वपतियों के वास्ते एवं पक्षियों के लिये जो भाग देना है उसे भूमि पर ही रख देना चाहिये। देवोंसे पितर और मनुष्यों से प्रेत-भूतों से गुह्यकों से पक्षी कृमि-कीटोंसे गृहस्थी मनुष्य उपजीवित होते हैं।४१-४२।

हंतकारस्तथैवान्यो धेन्वाः स्तनचतुष्ठयम।
स्वहाकारं स्तने देवाः स्वधां च पितरस्तथा।।४३।।
वषट्कारं तथैवान्ये देवा भूतेश्वरास्तथा।

हंतकारं मनुष्याश्च पिवंति सततं स्तनम् ॥४४॥
यस्त्वेतां मानवो धेनुं श्रद्धया ह्यनुपूर्विकाम् ।
करोति सतत काले साग्नित्वायीपकल्प्यते ॥४५॥
यस्तां जहाति वा स्वस्थस्तामिस्रे स तु मज्जति ।
तस्माद्दत्वा बलिं ताभ्यो द्वारस्थश्चितयेत्क्षणम् ॥४६॥
क्षुधार्तमतिथिं सम्यगेकग्रामनिवासिनम् ।
भोजयेत्तं शुभान्नेन यथाशक्त्यात्मभोजनात् ॥४७॥
अतिथियस्य भग्नाशो गृहात्प्रतिनिवर्तते ।
स तस्मै दुष्कृत्तं दत्वा पुण्यमादाय गच्छति ॥४८॥
ततोऽन्न प्रियमेवाश्नन्नरः शृङ्खलवाग्पुनः ।
जिह्वावेगेन विद्धोऽत्र चिरं कालं स तिष्ठति ॥४९॥

स्वाहाकार—स्वाधाकार—वषट्कार तथा हन्तकार ये चारों गायकों स्तनों में रहते हैं। इस स्तन में से देवता स्वाहाकार को-पितृगण स्वधा को-देवता वषट्को और भूतेश्वर भी इसी को एवं मनुष्य हन्तकार को निरन्तर पान करते हैं।४३-४४। जो मनुष्य गाय को श्रद्धाके साथ निरन्तर समय पर स्वभोजन देता है उसकी कल्पना साग्नित्व की जाती है।४५। जो गाय को त्याग देता है, वह अस्वस्थ रहता है और तामिस्र नामक नरक में जाया करता है इसलिये इन उपर्युक्त सबको बलि देकर एक क्षण के लिए अपने द्वार पर स्थित होकर विचार करना चाहिये।४६ प्रत्येक मनुष्य का परम आवश्यक कर्तव्य है कि प्रतिदिन यथाशक्ति अपने भोजनमें से किसी एक भूखे अभ्यागत को या किसी भी ग्रामके निवासीको सविधि श्रेष्ठ अन्नसे भोजन करावे ४७। जिसके घरमें कोई अभ्यागत निराश लौटजाता है वह उस गृहस्थी को पापका पुञ्ज प्रदान समस्त पुण्य के सञ्चय को लेकर चला जाया करता है।४८। अभ्यागत के निराश हो लौटजाने पर जो स्वयं भोजन करता है और स्वाद लिया करता है वह बहुत समय तक शृङ्खलायुक्त जीभ के वेग से विधा हुआ रहता है।४९।

यतस्तन्मांसमुद्धृत्य तिलमात्रप्रमाणतः ।

खादितुं दीयते तेषां भित्त्वा चैव तु शशोणितम् ॥५०॥
निःशेषतः कशाभिस्तु पीड्यते क्रमशः पुनः ।
बुभुक्षयातिकष्टं हि तथा चातिपिपासया ॥५१॥
एवमाद्या महाघोरा यातनाः पापकर्मणाम् ।
अन्ते यत्प्रतिपन्नं हि तत्संक्षेपेण सम्शृणु ॥५२॥
यः करोति महापापं धर्मं चरति नै लघु ।
धर्मं गुरुतरं वापि तथाबस्थे तयोः शृणु ॥५३॥
सुकृतस्य फल नोबत्तं गुरुपापप्रभावतः ।
न मिनोति सुखं तत्र भोगैर्बहुभिरन्वितः ॥५४॥
तथोद्विग्नोऽतिसंतप्ता न भक्ष्यैर्मन्यते सुखम् ।
अभाववादग्रतोऽन्यस्थ प्रतिकल्यं दिने दिने ॥५५॥
पुमान्यो गुरुधर्माऽपि सोपवासी यथा गृही ।
वित्तवान्न विजानाति पीडां नियमसंस्थितः ॥५६॥
तानि पापानि घोराणि सन्ति यैश्च नरो भुवि ।
शतधा भेदमाप्नोति गिरिर्वज्रहतो यथा ॥५७॥

नरक में ऐसे पापात्मा प्राणी के जीभके मांस को उचेल कर तिल भर प्रमाण के जन्तुओं को खानेको दिया जाता है । फिर उसके रुधिरको भेदन करके सारे शरीरको क्रमशः पीड़ित एवम् ताड़ित कियाजाता है । तब उस प्राणी से भूख-प्यासके कारण अत्यन्त कष्टके साथ चलाजाता है ।५०-५१ इस रीति से संसार के जीवन में पापकर्म करनेवालों की बहुतसी यातनायें होती हैं । अन्त में जो भी कुछ उन्हें प्राप्त होता है उसको बतलाताहूँ,उसे ध्यानपूर्वक सुनो ।५२।जो पुरुष पापतो बहुत बड़ा और पुण्यबहुतही स्वल्प करता है या बहुत धर्म करता है -इन दोनोंकी दशा बतलाता हूँ उसे श्रवण करो ।५३। बड़े पापका प्रभाव भी बड़ा होता है और उससे थोड़े धर्म का फल नहीं मिला करता है । उस पापके प्रभावसे बहुत भोगोंमें फँसाहुआ भी उनमें सुख का अनुभव नहीं कियाकरता है ।५४। ऐसा पुरुष परम दुःखित एवं हृदयमें जलता हुआ रहकर भोजनके योग्य पदार्थोंमें कभी भी सुख नहीं

माना करता है। वह सर्वदा अपने लिये उनका अभाव ही माना करता है और दूसरों के आगे देख कर उसे दुःख होता है।५५। जो अधिक धर्म करने वाला है वह उपवास करने वाले एक गृहस्थ के तुल्य धनवान् होकर सर्वदा नियममें स्थित रहकर अपनी पीड़ाका होना मानता ही नहीं है।५६। ऐसे भी अत्यन्त महा घोर पाप हैं जिनके कारण मनुष्य पृथ्वी पर वज्रसे तड़ित हुए पर्वतके समान सैकड़ों ही भेद वाला हो जाता है।५७।

॥ तर्पण तपस्या आदि परमार्थ का फल ॥

पानीयदानं परमं दानानामुत्तमं सदा।
सर्वेषाँ जीवपुंजानां तर्पण जीवनं स्मृतम् ॥ १ ॥
प्रपादानमतः कुर्यात्सुस्नेहाद्दनिवारितम्।
जलाश्रयविनिर्माणं महानन्दकरं भवेत् ॥ १ ॥
इह लोके परे वापि सत्यं सत्यं न संशयः।
तस्माद्वापीश्च कूपांश्च तडागान्कारयेम्नरः ॥ ३॥
अर्द्धं पापस्य हरति पुरुषस्य विकर्मणः।
कूपः प्रवृत्तपानायः सुप्रवृत्तस्य नित्यशः ॥ ४ ॥
सर्वं तारयते वंश यस्य खाते जलाशये।
गावः पिबंति विप्राश्च साधवश्च नराः सदा ॥ ५ ॥
निदाघकाले पानीयं यस्य तिष्ठत्यवारितम्।
सुदुर्गं विषमं कृच्छ्रं न कदाचिदवाप्यते ॥ ६ ॥
तडागानां च बक्ष्यामि कृतानां ये गुणाः स्मृताः।
त्रिषु लोकेषु सर्वत्र पूजितो यस्तडागवान् ॥ ७ ॥

श्री सनत्कुमाजी ने कहा-जलका दान समस्त दानों में बहुत ही श्रेष्ठ एवं बड़ा दान है। यह सदा समस्त जीवोंकी पूर्णतृप्ति करनेवाला होता है। यह जीवन देनेवाला मानागया है।१। इसलिये बड़े ही प्रेम के साथ प्याऊ लगाकर जलका दान करनाचाहिए। जलाशयोंका निर्माण कराना बहुत ही आनन्दका देने वाला होता है।२। मनुष्यको कूपतथा बावड़ी का निर्माण अवश्यही करना चाहिए। इससेइस लोक और परलोकदोनों स्थानों में परम

आनन्दकी प्राप्ति होती है यह अक्षरशः सत्य है। इसमें कुछ भी किसी को सन्देह नहीं करना चाहिए।३। जल परिपूर्ण कूप नित्यही पापकर्ममें प्रवृत्त होनेवाले पुरुषका आधापाप नष्टकर देता है।४। जिसके द्वारा निर्मित झील या सरोवरमें गौ, ब्राह्मण, साधु और मनुष्य सदा जलपीते हैं उसका वंशतर जाया करता है।५। ग्रीष्म कालमें जिसका जल बिना रोके हुए ही स्थित रहता है वह निर्माणकर्त्ता कभी-कभी घोर कठिनता तथा बड़ा दुःख नहीं पाया करता है।६। बनाये हुए सरोवरोंके जो गुण बतलाये गये हैं अब मैं उनका वर्णन करता हूँ। जो तालाबके निर्माण करानेवाला मनुष्य होता है वह तीनों लोकों में सर्वत्र आदर के सहित पूजित होता है।७।

अथवा मित्रसदने मैत्रं मित्राविवर्जितम् ।
कीर्तिसंजननं श्रेष्ठ तडागानां निवेशनम् ॥ ८ ॥
धर्मस्यार्थस्य कामस्य फलमाहुर्मनीषिणः ।
तडागः सुकृतो येन तस्य पुण्यमनन्तकम् ॥ ९ ॥
चतुर्विधानां भूतानां तडागः परमाश्रयः ।
तडागादीनि सर्वाणि दिशन्तिश्रियमुत्तमाम् ॥१०॥
देवा मनुष्या गन्धर्वाः पितरो नागराक्षसः ।
स्थावराणि च भूतानि संश्रयंति जलाशयम् ॥११॥
प्रावृड्तौ तडागे तु सलिलं यस्य तिष्ठति ।
अग्निहोत्रफलं तस्य भवतीत्याह चात्मभूः ॥१२॥
शरत्काले तु शलिलं तडागे यस्य तिष्ठति ।
गोसहस्रफल तस्य भवेन्नवात्र संशय ॥१३॥
हेमन्ते शिशरे चैव सलिलं यस्य तिष्ठति ।
स वै बहुसुवर्णस्य यज्ञस्य लभते फलम् ॥१४॥

तालाबोंका निर्माण करना, मित्रके घर में मित्रसे दुःख रहित मित्रता तथा कीर्त्तिका विस्तारकराने बाला अत्यन्तश्रेष्ठ होता है।८। जिस व्यक्ति ने अपने किये हुए शुभ कर्मसे सरोवर बनवाया है उसका अनन्त पुण्य उसे मिलता है। बुद्धिमान मनुष्य धर्म अर्थ और कामको इस कारणसेही सफल

कहा करते हैं ।९। सरोवर चारप्रकार के प्राणियोंका परमआश्रय होता है। तड़ाग आदि समस्त जलाशय उत्तम लक्ष्मी के प्रदान करने वाले होते हैं ।१०। देव, मनुष्य, गन्धर्व, पितर, नाग, राक्षस, स्थावर, भूत (प्राणी) आदि सब जलाशय को आपका आश्रय बनाया करते हैं ।११। जिसके द्वारा निर्मित जलाशयमें वर्षा ऋतुमें जल रहता है उसकी अग्नि-होत्र करने के तुल्य पुण्य होता है ऐसा ब्रह्माजी ने कहा है ।१२। जिसके बनायेहुए सरोवरहै शरत्काल में जल भरा रहता है उसे एक सहस्र गोदान के समान पुण्यकी प्राप्ति हुआ करती है इसमें कुछभी सन्देह नहीं है ।१३। जिसके सरोवरमें हेमन्त तथा शिशिर ऋतु में जल ठहरता है वह अत्यधिक सुवर्ण के दान के समान पुण्य का फल प्राप्त करता है ।१४।

वसंते च तथा ग्रीष्मे सलिलं यस्य तिष्ठति ।
अतिरात्राश्वमेधानां फलमाहुर्मनीषिणः ॥१५॥
मुने व्यासाथवृक्षाणां रोपणे च गुणाच्छृणु ।
प्रोक्तं जलाशयफल जीवप्रीणनमुत्तमम् ॥१६॥
अतीतानागतान्सर्वान्पितृवंशांस्तु तारयेत् ।
कान्तारे वृक्षरोपी यस्तस्माद् वृक्षांस्तु रोपयेत् ॥१७॥
तत्र पुत्रा भवन्त्येते पादपा नात्र संशयः ।
परं लोकं गतः सोऽपि लोकानाप्नोति चाक्षयन् ॥१८॥
पुष्पैः सुरगणान्सर्वान्फलैश्चापि तथा पितॄन् ।
छायया चातिथीन्सर्वान्पूजयन्त्य महीरुहाः ॥१९॥
कन्नरोरगरक्षांसि देवगन्धर्वमानरवः ।
तथैवर्षियणाश्चैव संश्रयंति महीरुहान् ॥२०॥
पुष्पिताः फलवंतश्च तर्पयतीह मानवान् ।
इह लोके परे चैव पुत्रास्ते धर्मतः स्मृताः ॥२१॥

वसन्त और ग्रीष्म ऋतुमें जिसके निर्मित सरोवर में जल रहता है उसे अतिरात्रि तथा अश्वमेध यज्ञोंका फलप्राप्त होना मनीषी लोग करते हैं ।१५ हे मुने ! हे व्यास महर्षे ! मैंने जीवोंको संतुष्ट करनेवाले जलाशयके निर्माण

का पुण्य फल बता दिया है। अब वृक्षों के पुण्य के विषयमें वर्णन करते हैं उसे आप श्रवण करें।१६। जो कोई व्यक्ति वन में वृक्षोंको लगाता है वह व्यतीत हुए तथा आगे आनेवाले समस्त पितृ-वंशोंका उद्धार करदेता है। इसलिये वृक्षारोपण का पुण्य कार्य अवश्यही करना चाहिये।१७। ये लगाये हुए वृक्ष दूसरे जन्म में उस लगाने वाले के पुत्र सम होते हैं। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। वह वृक्षारोपण कर्त्ता भी मृत्युगत होकर अक्षय लोकों को प्राप्त होता है।१८। लगाये हुए वृक्ष पुष्पोंके द्वारा देवगण को, फलों से पितरों को, छाया से अतिथियों के इस तरह सबमें पूजक होते हैं।१८। किन्नर, सर्प, राक्षस, देवता, गन्धर्व, मनुष्य यथा ऋषिगणसे सभी वृक्षों को अपना आश्रय बनाया करते हैं।२०। लोक में पुष्पित तथा फलित वृक्ष मनुष्योंको पूर्ण मानसिक एवं शारीरीक तृप्ति प्रदान कियाकरते हैं। इसलिये वे इस लोक तथा परलोक में धर्मके पुत्र कहे जाते हैं।२१।

तडागकृद् वृक्षरोपी चेष्टयज्ञश्च यो द्विजः।
एते स्वर्गान्न हीयते ये चान्ये सत्यवादिनः ॥२२॥
सत्यमेव परं ब्रह्म सत्यमेव परं तपः।
सत्यमेव परो यज्ञः सत्यमेव पर श्रुतम् ॥२३॥
सत्यं सुप्तेषु जागर्ति सत्यं च परमं पदम्।
सत्येनैव धृता पृथ्वी सत्ये सव प्रतिष्ठितम् ॥२४॥
तपो यज्ञश्च पुण्यं च देवर्षिपितृपूजने।
आपो विद्या च ते सर्वे सर्वं सत्ये प्रतिष्ठितम् ॥२५॥
सत्यं यज्ञस्तपो दानं मन्त्रा देवी सरस्वती।
ब्रह्मचर्यं तथा सत्यमोंकारः सत्यमेव च ॥२६॥
सत्येन वायुरभ्येति सत्येन तपते रविः।
सत्येनाग्निर्दहति स्वर्गः सत्येन तिष्ठति ॥२७॥
पालनं सर्व वेदानां सवतीर्थावगाहनम्।
सत्येन वहते लोके सर्व माप्नोत्यसंशयम् ॥२७॥

जो द्विज सरोवर, बाग बनाने वाला तथा पंच महायज्ञ करने वाला होता है वह कभी भी स्वर्गलोकसे नीचे नहीं पतित होता है।२१। सत्य ही

परब्रह्म है, सत्य ही परम तप है, सत्य ही परम यज्ञ है और सत्य ही परम आदरणीय शास्त्र है ।२३। सत्य ही सोने वालोंको जगाता है, सत्यही परम पद है, इस सत्य ने ही पृथ्वी मंडल को धारण कररखा है,इस परम श्रेष्ठ सत्य ही में कुछ विद्यमान रहता है ।२४। तप, यज्ञ, पुण्य, देव, ऋषि, पितृ,पूजन,जल और विद्या आदि सभी इस एक सत्य ही में प्रतिष्ठित होते है ।२५। सत्य ही यज्ञ, तप, दान, ब्रह्मचर्य है । सत्य ही ओंकार है और सत्य ही मन्त्रों वाली देवी सरस्वती है ।२६। सत्यके प्रभाव से यह वायु चलता है । सत्यकी शक्तिसे सूर्य देव संसारमें तपा करते हैं । सत्यसेही अग्नि जलती है और सत्यसेही स्वर्गकी प्राप्ति हुआकरती है ।२७। समस्त वेदोंकी प्राप्ति तथासमस्त तीर्थोंमें स्नानकरने का फलकेवल एक सत्यसेही प्राप्त हो जाता है। सत्यसे सभीकुछ मिलजाता है, इसमें कुछभी संशय नहीं है ।२८।

अश्वमेधसहस्रं च सत्यं च तुलया धृतन् ।
लक्षाणि क्रतवश्चैव सत्यमेव विशिष्यते ।।२९।।
सत्येन देवाः पितरो मानवोरगराक्षसाः ।
प्रीयन्ते सत्यतः सर्वे लोकाश्च सचराचराः ।।३०।।
सत्यमाहुः परं धर्मः सत्यमाहुः परं पदम् ।
सत्यमाहुः प ं ब्रह्म तस्मात्सत्य सदा वदेत् ।।३१।।
मुनयः सत्यनिरतास्तपस्तप्त्वा सुदुश्चरम् ।
सत्यधर्मरतः सिद्धास्ततः स्वर्वं च ते गताः ।।३२।।
अप्सरोगणयंविष्टैर्विमानैः परिमातृभिः ।
वक्तव्यं च सदा सत्यं न सत्याद्विद्यते परम् ।।३३।।
अगाधे विपुले सिद्धे सत्यतीर्थे शुचि ह्रदे ।
स्नातव्यं मनसा युक्तं स्थानं तत्परमं स्मृतम् ।।३४।।
आत्मार्थे वा परार्थे वा पुत्रार्थे वापि मानवाः ।
अनृतं ये न भाषन्ते ते नराः स्वर्गगामिनः ।।३५।।

सहस्त्रों अश्वमेधों का फल तथा लाखों अन्य यज्ञों का पुण्य तराजू में एक ओर रखो और एक ओर दूसरे पलड़ेमें सत्यको रखो तो सत्य वाला

पलड़ा ही नीचेकी ओर झुकेगा । अतः सत्य इन सबसे विशेष होता है ।२६
सत्यसे देवता, पितृगण, मनुष्य, सर्प, राक्षस आदि चर एवं अचरके सहित
सम्पूर्णलोक प्रसन्न होते हैं ।३०। सत्यही सबसे श्रेष्ठ परम धर्म कहा गया
है, सत्यही सर्वोत्तम परमपद बतायागया है और सत्यहीको साक्षात् पर-
ब्रह्मका स्वरूप माना गया है । इसलिये सर्वदा सत्यका ही भाषण करना
चाहिये ।३१। सत्यमें परायण मुनि अति कठिन तपश्चर्या करके तथा सत्य
स्वरूप धर्ममें प्रवृत्त सिद्ध सभी स्वर्गको प्राप्त हुए हैं ।३२। अप्सराओं से
प्रविष्टहुए विमानों के सहित परिमाताओंको सदा सत्य कहना चाहिये क्यों
कि सत्य से अधिक धर्म कुछभी नहीं है ।३३। सत्यरूपी तीर्थका ह्रद परम
अगाध, परम सिद्ध एवं अतिपवित्र है इनमें मनसहित स्नान करके अतुल
सुख प्राप्त करना चाहिए । इसे सर्वोपरि परम स्थान कहागया है ।३४।
जो सत्पुरुष अपने लिए, पराये काज के लिये या अपने पुत्र के हित के
लिए झूठ नहीं बोलते हैं वे मनुष्य निश्चय ही स्वर्ग के गामी होते हैं ।३५

वेदा यज्ञास्तथा मंत्राः संति विप्रेषु नित्यशः ।
नो भांत्यपि ह्यसत्येषु तस्मात्सत्य समाचरेत् ॥३६॥
तपसो मे फल ब्रूहि पुनरेव विशेषतः ।
स्वर्षां चैव वर्णानां ब्रह्मणाना तपोधने ॥३७॥
प्रवक्ष्यामि तपोऽध्याय सर्वकामार्थधकम् ।
सुदुश्चरं द्विजातीनां तन्मे निगदतः शृणु ॥३८॥
तपो हि परमं प्रोक्तं तपसा विद्यते फलम् ।
तपोरता हि ये नित्य मोदत सह दैवतैः ॥३९॥
तपसा प्राप्यते स्वर्गस्तपसा प्राप्यते यशः ।
तपसा प्राप्यते कामस्तपः सर्वार्थसाधनम् ॥४०॥
तपसा मोक्षमाप्नोति तपसा विंदते महत् ।
ज्ञानविज्ञानसंपत्तिः सौभाग्यं रूपमेव च ॥४१॥
नानाविधानि वस्तूनि तपसा लभते नरः ।
तपसा लभते सर्वं मनसा यद्यदिच्छति ॥४२॥